शैक्षिक मंथन

(द्विभाषी मासिक)

शैक्षिक क्षेत्र की प्रतिनिधि पत्रिका

वर्ष : 17 अंक : 6 1 जनवरी 2025

पौष, विक्रम संवत् 2081

परामर्श

डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल

जगदीश प्रसाद सिंघल

शिवानन्द सिन्दनकेरा

जी. लक्ष्मण

महेन्द्र कुमार

❖

सम्पादक

प्रो. शिवशरण कौशिक

❖

संपादक मंडल

प्रो. नन्द किशोर पाण्डेय

प्रो. राजेश कुमार जांगिड़

प्रो. ओमप्रकाश पारीक

डॉ. एस.पी. सिंह

भरत शर्मा

❖

प्रबन्ध सम्पादक

महेन्द्र कपूर

❖

व्यवस्थापक : **बसंत जिंदल**

कार्यालय प्रमुख : **आलोक चतुर्वेदी**

मो. 9828337560

❖

प्रेषण प्रभारी : **नौरंग सहाय 'भारतीय'**

प्रकाशकीय कार्यालय

82, पटेल कॉलोनी, सरदार पटेल मार्ग,

जयपुर (राजस्थान) 302001

दूरभाष : 9414040403

दिल्ली ब्यूरो :

शैक्षिक महासंघ सदन, 606/13,

कृष्णा गली नं.9, मौजपुर, दिल्ली - 110053

E-mail :

shaikshikmanthan@gmail.com

Visit us at :

www.shaikshikmanthan.com

वार्षिक शुल्क ₹ 300/-

दस वर्षीय शुल्क ₹ 2000/-

पृष्ठ संयोजन : सागर कम्प्यूटर, जयपुर

शैक्षिक मंथन मासिक में प्रकाशित सामग्री से संपादक मण्डल का सहमत होना आवश्यक नहीं है तथा चित्रों का प्रतीकात्मक प्रयोग किया गया है।

भारतीय त्योहारों का सामाजिक-आर्थिक दर्शन

❑ प्रो. ब्रजेश पति त्रिपाठी

हमारे त्योहारों के चलते देश की अर्थव्यवस्था को जो गति मिलती है उसको संभालने की आवश्यकता है, क्योंकि चीन जैसे अनेक देश हमारे त्योहारी अर्थव्यवस्था का फायदा उठाने के लिए पूरा जोर लगा रहे हैं। कहीं ऐसा ना हो इन स्थितियों का लाभ हमारे देश के बजाय दूसरी जगह चला जाए। बाजार में बने रहने के लिए कौशल का परिमार्जन जरूरी है। भारतीय उत्पादों को विश्व स्तरीय प्रतिस्पर्धा के अनुकूल बनाने के लिए प्रोत्साहन और प्रशिक्षण की आवश्यकता है। सरकार को इस पर अवश्य ध्यान देना चाहिए।

4

अनुक्रम

3.	संपादकीय	-	प्रो. शिवशरण कौशिक
8.	भारतीय त्योहारों का मनोवैज्ञानिक महत्त्व	-	डॉ. अश्विनी कुमार
11.	दुर्गा पूजा	-	जितेन्द्रभाई गोर्धनभाई चौहान
16.	भारत के शस्योत्सव	-	डॉ. मैथिली प्र. राव
19.	भारतीय त्योहारों की विश्व व्यापकता	-	डॉ. गौरी त्रिपाठी
22.	राजस्थान की गौरवपूर्ण उत्सव परंपरा	-	डॉ. ममता जोशी
27.	दीपावली का आर्थिक महत्त्व	-	प्रो. एन.एम. खंडेलवाल
30.	भारतवर्ष में शिक्षा त्योहारों और पुस्तक पर्व ...	-	डॉ. विजेता एस. सिंह
32.	भारत के सतत विकास की कुंजी हैं त्योहार...	-	डॉ. राजकुमार चतुर्वेदी
38.	Festivals and Celebrations of Bharath	-	Dr. Rohinaksha Shirlalu
42.	Festivals of Bharat	-	Dr. TS Girish Kumar

Role of Vedic Festivals in Rural-Urban Integration in India

❑ **Dr. Papai Pal**

Vedic festivals are more than just celebrations; they are living traditions that bind India's rural and urban populations into a cohesive cultural fabric. By fostering economic ties, promoting cultural exchange, and preserving traditional values, these festivals play a vital role in rural-urban integration. In an age where the rural-urban divide often threatens national unity, the enduring wisdom of Vedic festivals serves as a beacon of harmony, reminding us that despite our differences, we are part of a shared heritage and destiny.

35

ISSN 2581-4133

संपादकीय

प्रो. शिवशरण कौशिक
संपादक

भारत मूलत: प्राचीन उत्सवधर्मी देश है और हमारी संस्कृति भी अत्यंत प्राचीन है। इसी क्रम में हमारे उत्सव और पर्व-त्योहार भी अति प्राचीन हैं। हमारे सभी प्रकार के त्योहारों के कुछ महत्त्वपूर्ण उद्देश्य भी होते हैं तथा मूल्य भी। जीवन के भी कुछ मानवीय तथा परीक्षित मूल्य होते हैं जिनसे उत्सव , त्योहार आदि की उद्भावना होती है। इन मूल्यों की लोक में तथा जीवन में स्थापना करना भी उत्सव के आयोजन का मुख्य उद्देश्य होता है। उत्सव, त्योहारों की सामूहिकता इन मूल्यों की स्थापना में निरापद भूमिका निभाती है। यद्यपि हमारा समाज प्रत्येक कालखंड में इन भारतीय उत्सव, त्योहारों की उपयोगिता को अपने युगानुकूल बनाते हुए आयोजित करता आया है, फिर भी इनकी मौलिकता को बचाए रखने की एक बड़ी चुनौती आज समाज के समक्ष है।

वस्तुत: इन उत्सवों की परिवर्तित स्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए आज इनकी सकारात्मक उपादेयता की रक्षा की आवश्यकता है। ठीक उसी प्रकार, जैसे बादल समुद्र से जल तो ग्रहण करता है परंतु उसका क्षार (खारापन) अपनी गठरी में भरकर नहीं लाता, उसमें जो माधुरी है, जो मधुर जल है, वही लाता है।

भारत के नदी, पर्वत आदि किस प्रकार से संस्कृति के संवाहक हैं इसका उल्लेख महादेवी वर्मा के एक संस्मरण से मिलता है, उनके अनुसार ''एक बार थाईलैंड के एक व्यक्ति द्वारा बताया गया कि हम तो गंगाजल से अपने सभी अनुष्ठान पूर्ण करते हैं, उनसे जब पूछा गया कि आपको गंगाजल कैसे मिलता है ? वह तो प्रयाग, भारत में है। तो उन्होंने कहा कि हम अपनी नदी का जल घट में भरकर रख लेते हैं और उसके चारों ओर परिक्रमा करके मंत्र पढ़कर गंगाजल बना लेते हैं।'' कल्पना की जा सकती है कि हमारी एक पावन नदी कहाँ तक फैली है। यह कैसे संभव हुआ ? यह भारतीय समाज द्वारा माँ गंगा की पवित्रता और पावनता के प्रति अपार श्रद्धा प्रकट करने वाले कुंभ जैसे अनेक आयोजन व उत्सवों के कारण ही संभव हुआ। सागर, नदी, पर्वत, बादल, वन, वृक्ष, सरोवर, पशु, पक्षी आदि पर केंद्रित अनेक पर्वों तथा उत्सवों से हमारा निरंतर रागात्मक संबंध बना हुआ है। इन पर केंद्रित उत्सवों में भारतीय संस्कृति तथा जीवन मूल्यों के सजीव दर्शन होते हैं।

सच्चाई तो यह है कि भारत में प्रतिदिन कोई न कोई उत्सव या त्योहार देश के किसी न किसी भाग में हर्षोल्लास से मनाया जाता है। इनमें सभी का अपना महत्त्व, स्वरूप और आनंद है। कुछ त्योहार राष्ट्रीय तथा अंतरराष्ट्रीय स्तर पर आयोजित होते हैं, तो कुछ स्थानीय व क्षेत्रीय त्योहारों की भी अपनी विशिष्टताएँ होती हैं। ये त्योहार प्रत्येक भारतीय को भावनात्मक एकता के सूत्र में बाँधने का कार्य करते हैं। बहुत से त्योहारों पर मेले भी आयोजित होते हैं जो सामाजिक मेलजोल और हृदय की उदात्तता की प्रक्रिया के जीवंत आधार हैं।

भारत की उत्सव परंपरा विश्व में अनूठी है। भारतीय उत्सव सामाजिक एकता, धार्मिक श्रद्धा तथा सांस्कृतिक समरसता के प्रतीक हैं। इन उत्सवों में हमारा इतिहास, हमारी ललित कलाएँ, हमारा जीवन दर्शन तथा साधारण शिष्टाचार आदि सभी पुष्ट होते हैं। विविधता में एकता की भारत की आत्मा को जीवंत बनाए रखने वाले ये उत्सव भारत की आध्यात्मिक पहचान को भी सुरक्षित-संरक्षित रखे हुए हैं।

सामान्यतया परिवारों में भी अनेक प्रकार के सामाजिक उत्सव व त्योहार आयोजित होते हैं। जन्मोत्सव, विवाहोत्सव, रक्षाबंधन आदि का परिवार के सदस्यों में परस्पर सौहार्द तथा सम्मान बनाए रखने में महत्त्वपूर्ण योगदान है। ये त्योहार जाति, धर्म, भाषा, क्षेत्र आदि की सीमाओं के पार जाकर आयोजित किए जाते हैं। यह उचित ही है कि जब हम भारतीय उत्सव और त्योहारों की प्रसंगवश चर्चा करते हैं तो निश्चित ही भारतीय सनातन परंपरा से लेकर कालांतर में उपस्थित हुए विभिन्न पंथ और उपसमाजों के उत्सव त्योहार भी इसमें सम्मिलित हैं। अर्थात् समग्र रूप में भारत की राष्ट्रीयता को पोषित करने वाले सभी पर्व और उत्सवों का समान महत्त्व है। कैलास मानसरोवर से कन्याकुमारी तक भारत में उत्सवों और त्योहारों की बड़ी धूम रही है जिनका वर्णन महाकवि कालिदास, गीतकार जयदेव, गोस्वामी तुलसीदास, ब्रजसूर्य, सूरदास, भास, बाबा नानक, दक्षिण के तिरुक्कुरल जैसे अनेक कवियों ने अपनी अपनी भाषाओं में किया है। निश्चित ही अनेक सामाजिक राजनीतिक हस्तक्षेपों के कारण भारत की सामाजिक संरचना में परिवर्तन आया है। परंतु कुछ शाश्वत मान्यताएँ हैं जिन में कोई अंतर नहीं आया, उत्सव और त्योहार भी उनमें से एक हैं। इसलिए निस्संदेह यह कहा जा सकता है कि भारत की उत्सवधर्मी संस्कृति सदैव लोकोपकारी तथा आत्म कल्याणकारी जीवन दर्शन से पुष्ट रही है। ये उत्सव भारत के लोगों को पशुता से ऊपर उठाकर मानवता के सिंहासन पर दृढ़तापूर्वक बैठाने का कार्य करते रहे हैं।

शैक्षिक मंथन का यह अंक भारतीय पर्व, उत्सव और त्योहारों के सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनीतिक और आर्थिक पक्षों की पड़ताल का एक लघु प्रयास है। कई लेखों में इन विषयों पर विस्तार से चर्चा की गई है। आशा है इन लेखों से पाठकगण के मन में भारत की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि को और अधिक जानने की इच्छा बलवती होगी। ❑

भारतीय त्योहारों का सामाजिक-आर्थिक दर्शन

प्रो. ब्रजेश पति त्रिपाठी
पूर्व विभागाध्यक्ष –
अर्थशास्त्र,
पाटलिपुत्र विश्वविद्यालय,
पटना, बिहार

भारत त्योहारों का देश है। यहाँ हर वर्ष, हर माह, हर राज्य में तिथि के अनुसार कई प्रकार के त्योहार मनाए जाते हैं। आमतौर पर लोग त्योहारों को उनके धार्मिक व सांस्कृतिक महत्त्व के लिए जानते हैं परन्तु ये केवल धर्म ही नहीं बल्कि अर्थ, रोजगार, सामाजिकता, प्रेम और सौहार्द के भी वाहक होते हैं। कुछ आलोचक वर्ष भर मनाए जाने वाले त्योहारों की आलोचना भी करते हैं। उनके अपने तर्क हैं। वो इन त्योहारों को फिजूलखर्ची और समय की बर्बादी के रूप में रेखांकित करते हैं। उनको लगता है कि ये पर्व आडंबर से युक्त हैं और पाखंड को बढ़ावा देते हैं। आजकल इन त्योहारों का विरोध करने का फैशन चल गया है। अज्ञान के कारण ये लोग नहीं जान पाते हैं कि भारतीय त्योहार सामाजिक व सांस्कृतिक उन्नयन तो करते ही हैं साथ ही इनमें आर्थिक विकास, उत्सवधर्मिता, रोजगार, सामूहिकता, पर्यटन, परोपकार, व्यापार, कला, शिल्प समेत अनेक पक्षों का संवर्धन व विकास निहित है। ये पर्व केवल हमारी आस्था को ही नहीं बढ़ाते हैं बल्कि लोगों में उत्साह उमंग आपसी प्रेम और सौहार्द का भी संचार करते हैं।

''भारत की जो सांस्कृतिक विविधता एवं संपन्नता है उसको सबसे आगे लाकर हम भारत को एक सांस्कृतिक महाशक्ति के रूप में परिवर्तित कर सकते हैं। यह हमारा उद्देश्य एवं आकांक्षा होना चाहिए''।

दुनिया भर में अलग-अलग देशों में इस उद्योग के आँकड़े को आँकने के पैमाने उपलब्ध हैं। भारत में अभी इस क्षेत्र में ज्यादा काम नहीं हुआ है क्योंकि हमारी विरासत बहुत बड़ी है एवं बहुत से क्षेत्रों में फैली हुई है। दुनिया भर में इसे सांस्कृतिक एवं रचनात्मक उद्योग का नाम दिया गया है। यूनेस्को के एक आकलन के अनुसार विश्व के सकल घरेलू उत्पाद में 4 प्रतिशत हिस्सा सांस्कृतिक एवं रचनात्मक उद्योग से आता है। अमेरिका जैसे देशों की जीडीपी में तो सांस्कृतिक एवं रचनात्मक उद्योगों का योगदान बहुत अधिक है। एक आकलन के अनुसार दुनिया भर में सांस्कृतिक एवं रचनात्मक उद्योग एशिया पैसिफिक, उत्तरी अमेरिका, यूरोप एवं भारत में विकसित अवस्था में पाए गए है। इस उद्योग में विश्व की 1 प्रतिशत आबादी को रोजगार उपलब्ध हो रहा है। भारत में चूंकि इसके आर्थिक पहलू का मूल्यांकन नहीं किया जा सका है। अत: देश में इस उद्योग में उपलब्ध रोजगार एवं देश के सकल घरेलू उत्पाद में योगदान संबंधी पुख्ता आँकड़े उपलब्ध नहीं है, फिर भी ये त्योहार अर्थव्यवस्था को ज़बरदस्त बूस्ट देते हैं।

हमारे ऋषियों और महर्षियों ने धर्म को जीवन के अन्य आयामों से अलग नहीं रखा बल्कि हमारी संस्कृति का ताना बाना ऐसे बुना गया जिसमें सबकुछ समाहित हो। इसका परिणाम यह हुआ कि त्योहार और पर्व हमारी अर्थव्यवस्था को गति देने का एक बड़ा माध्यम बन गए। पर्व के नाम पर होने वाली खरीदारी से बाजार मजबूत होता है और अर्थव्यवस्था को गति मिलती है। इन त्योहारों पर दैनिक उपयोग की वस्तुओं की बिक्री तो बढ़ती ही है साथ ही ऐसी वस्तुएँ भी काम आ जाती हैं जिन्हें आमतौर पर बेकार समझकर फेंक दिया जाता है। धार्मिक अनुष्ठानों और व्रत में इस्तेमाल

 ISSN 2581-4133

करके इनको उपयोगी बनाया जाता है। इसके माध्यम से एक ऐसा बाजार विकसित होता है जो गरीब तबके के वंचित लोगों को न्यूनतम खरीद दर या लगभग मुफ्त में व्यापार करने के लिए प्रोत्साहित करता है। मसलन धार्मिक रीति रिवाजों एवं पूजा पाठ में इस्तेमाल होने वाले फूल, बेलपत्र, दुर्वा, केले के पत्ते, भांग, धतूरा जैसी कई सामग्रियां जो गरीब लोगों को बेहद सस्ती दरों पर या लगभग मुफ्त मिल जाती हैं, उनका व्यापार करके वह अपने जीवन निर्वाह के लिए गुजारा योग्य राशि का जुगाड़ कर लेते हैं। छठ पूजा पर बड़ी संख्या में मिट्टी के चूल्हों से अच्छी आय होती है जबकि इनको बनाने में कोई खर्च नहीं होता। इसी तरह व्रत में खाई जाने वाली ऐसी वस्तुएँ हैं जिनको लोग आमतौर पर खाना पसंद नहीं करते हैं, उनका भी इस्तेमाल अनिवार्य करके उनको उपयोगी बना लिया जाता है। उदाहरण के तौर पर सामा का चावल, तिन्ना का चावल, सिंघाड़े का आटा, कुट्टू का आटा, बकला का दाल, कर्मी का साग, नोनी का साग जैसे सैकड़ों खाद्य हैं जिनका उपयोग लोग सालों साल नहीं करते हैं, लेकिन पर्व के नाम पर इनकी अच्छी खासी बिक्री हो जाती है। इन उत्पादों के माध्यम से भी बाजार को गति मिलती हैं। इन वस्तुओं के अलावा दैन्य दिन में पूजा में उपयोग होने वाली सामग्री अक्षत, रोली, चावल, नारियल, पान, सुपारी, चंदन, फल-फूल व अन्य सामग्रियों की बिक्री से भी अर्थ को गति मिलती है। त्योहारों में विशेष रूप से दीपावली में अर्थव्यवस्था को बड़ा उछाल मिलता है। इसका कारण यह है कि हिन्दुओं में आमतौर पर दीपावली में ही बही खाता की बंदी होती है। हमारे मनीषियों ने इसको भांपते हुए कुछ ऐसे नियम बनाए हैं कि लोग दीपावली में अधिकाधिक खरीदारी करें और बंदी से पहले व्यापारियों को अच्छा लाभ मिल सके। जितने भी पर्व त्योहार हैं, उसमें आमतौर पर कपड़ों और खाने-पीने की सामग्रियों की बिक्री बढ़ जाती है। दीपावली में तो धनतेरस के बहुत पहले से ही खरीदारी शुरू हो जाती है, जो दीपावली से लेकर छठ तक चलती हैं। इस दौरान अचल संपत्ति जेवर, कपड़े, गहने, इलेक्ट्रॉनिक वस्तुएँ जैसे-टी.वी., फ्रिज, वाशिंग मशीन समेत तमाम इलेक्ट्रॉनिक आइटम, कार, बाइक, स्कूटी, सजावट के समान, बल्ब, लड़ियाँ, दिए, पटाखे, मिठाई जैसी सामग्रियाँ बहुतायत में बिकती हैं, जिसका लाभ अर्थव्यवस्था को मिलता है। होली, दीपावली, दशहरा, गणेश चतुर्थी, नवरात्रि, ओनम, रामनवमी, महाशिवरात्रि, श्रीकृष्ण जन्माष्टमी, रक्षा बंधन, तीज, जिउतिया, करवाचौथ जैसे कई महत्त्वपूर्ण त्योहार हैं जिनको मनाने की तैयारियाँ बहुत पहले से शुरू हो जाती हैं।

ये त्योहार अक्सर भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए बहुत बड़ी खुशखबरी लाते हैं क्योंकि देश के सभी नागरिक मिलकर इन त्योहारों के शुभ अवसर पर वस्तुओं की खूब खरीदारी करते हैं, जिसके कारण देश की अर्थव्यवस्था को बल मिलता है। इन त्योहारों के दौरान देश में एक से लेकर दो लाख करोड़ के बीच खुदरा व्यापार का एक बहुत बड़ा हिस्सा रहता है। त्योहारों के खंड काल में रोजगार के लाखों अवसर निर्मित होते हैं, और नौकरियों की तो जैसे बहार ही आ जाती है। सूचना प्रौद्योगिकी से लेकर ई कॉमर्स तक, खुदरा व्यापार से लेकर थोक व्यापार तक, विनिर्माण इकाइयों से लेकर सेवाक्षेत्र तक, विशेष रूप से पर्यटन होटल एवं परिवहन आदि लगभग सभी क्षेत्रों में ना केवल व्यापार में अतुलनीय वृद्धि दर्ज होती है, बल्कि रोजगार के नए अवसर भी निर्मित होते हैं।

वास्तव में हमारे ऋषि महर्षियों ने सभी त्योहारों को सहजता के साथ लोकजीवन से जोड़ा था। भारतीय परम्परा के आधार ऋषि और कृषि हैं ''ऋषि शास्त्रीय तथ्यों से कृषि को जोड़कर उत्सवों की अर्थमूलक महत्ता स्थापित करते हैं। उत्पादों के लिए बाजार तैयार करना इसी परंपरा का अहम हिस्सा है। इसका उद्देश्य श्रमिकों को उनकी मेहनत का प्रतिफल देना और व्यापार चक्र को गति देना है।''

त्योहारों के साथ पर्यटन का रिश्ता भी बहुत पुराना है। कुछ खास अवसरों पर लोग स्थान विशेष की यात्रा करके वहाँ की विशिष्ट संस्कृति, पर्व और त्योहारों का आनंद लेने के लिए भ्रमण करते हैं। ब्रज की होली, अयोध्या के दीपोत्सव, मैसूर के दशहरा मेला, प्रयाग नासिक, हरिद्वार और उज्जैन में लगने वाले कुंभ मेले,

जगन्नाथपुरी की रथ यात्रा, बंगाल की दुर्गा पूजा, गुजरात के गरबा और महाराष्ट्र के गणपति उत्सव को देखने और उसमें शामिल होने के लिए लाखों लोग पहुँचते हैं, जिससे देश के पर्यटन विभाग को बड़ा लाभ मिलता है। अर्थव्यवस्था को मजबूत करने में भी इससे मदद मिलती है। इन पर्व त्योहारों में बिकने वाली वस्तुओं का व्यापार देश व्यापी होता है। इस दौरान अलग-अलग प्रदेशों से सामग्रियों की आपूर्ति की जाती है।

भारत की संस्कृति में पर्व त्योहारों को बाजार व्यापार और अर्थव्यवस्था से जोड़ा गया है लेकिन इसका उद्देश्य उपभोक्तावाद नहीं है बल्कि यह सामूहिकता समरसता और परोपकार से जुड़ा हुआ है। इसकी मूल आत्मा समाज के हर वर्ग को अवसर प्रदान करने और उनकी भलाई, रोजी रोजगार उपलब्ध कराने की भावना से जुड़ी हुई है। भारत के त्योहार जहाँ बड़े दुकानदार और व्यापार की उन्नति करते हैं तो वहीं छोटे काम धंधे वालों को रोजगार के साथ-साथ सम्मान दिलाते हैं। त्योहार के समय पूजन कार्य में उपयोग आने वाली वस्तुएँ जैसे कपूर अगरबत्ती हवन सामग्री जैसे कई सामग्रियों का व्यापार भी बड़े स्तर पर होता है। वर्ष भर में लगभग ढाई लाख करोड़ का कारोबार त्योहार पर उपयोग होने वाली सामग्री से किया जाता है। सड़क किनारे बैठकर छोटी दुकान लगाने वालों से लेकर बड़ी थोक दुकानों तक से यह व्यापार होता है। अर्थतन्त्र का यह क्षेत्र पूर्ण रूप से त्योहार और धार्मिक कार्यों से जुड़ा हुआ है। त्योहार के समय सभी छोटे बड़े व्यापारियों को इसका सीधा लाभ मिलता है।

हमारे पर्वों के माध्यम से पोषित हो रहे शिल्प, कौशल और हस्तकला उत्पादों का आज स्थानीय ही नहीं राष्ट्रीय और वैश्विक बाजार भी है। ध्यातव्य है कि भारत में दुर्गा पूजा के अलावा यूनेस्को द्वारा अमूर्त सांस्कृतिक धरोहरों की सूची हमारी 13 परंपराएँ शामिल की जा चुकी हैं। जीवन के रंग सहेजता विरासत का यह पक्ष जीवन भी सहेजता है। लोक जीवन के रंग आज के तनाव और अवसाद भरे दौर में मन का मौसम भी बदलते हैं।

एक आँकड़े के अनुसार भारत में एक वर्ष में 51 त्योहार मनाए जाते हैं जिनमें से 17 राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त त्योहार हैं। भारतीय लोग अपनी आस्था रीति रिवाजों और परम्पराओं का पालन करते हैं, और इसके लिए कर्ज लेकर भी खर्च करते हैं। इन त्योहारों का अधिकतम लाभ उठाने के लिए खुदरा विक्रेता व अन्य विक्रेता अधिक ग्राहकों को आकर्षित करने के लिए छूट व मुफ्त उपहार जैसे विभिन्न प्रोत्साहन प्रदान करते हैं। त्योहार समाज और अर्थव्यवस्था में एकजुटता, सामूहिकता की भावना को बढ़ावा देते हैं और बाजार की ताकतों के लिए प्रोत्साहन के रूप में काम करते हैं। त्योहारी मौसम का सबसे ज्यादा लाभ ई कामर्स क्षेत्र ने लिया है। इस दौरान ई कॉमर्स कंपनियों की बिक्री बहुत अधिक बढ़ जाती है। कई बार यह दोगुना तक हो जाती है।

हमारे त्योहारों के चलते देश की अर्थव्यवस्था को जो गति मिलती है उसको संभालने की आवश्यकता है, क्योंकि चीन जैसे अनेक देश हमारे त्योहारी अर्थव्यवस्था का फायदा उठाने के लिए पूरा जोर लगा रहे हैं। कहीं ऐसा ना हो इन स्थितियों का लाभ हमारे देश के बजाय दूसरी जगह चला जाए। बाजार में बने रहने के लिए कौशल का परिमार्जन जरूरी है। भारतीय उत्पादों को विश्व स्तरीय प्रतिस्पर्धा के अनुकूल बनाने के लिए प्रोत्साहन और प्रशिक्षण की आवश्यकता है। सरकार को इस पर अवश्य ध्यान देना चाहिए।

दो हजार ग्यारह की जनगणना के अनुसार हमारे देश में 2.1 मिलियन मंदिर हैं जो चढ़ावे के माध्यम से बहुत सारा धन कमाते हैं। मंदिर और त्योहार मिलकर पूरी अर्थव्यवस्था को ऊपर उठाते हैं। व्यापार को मजबूती प्रदान करते हैं और व्यय संतुलन के माध्यम से भारतीय अर्थव्यवस्था को तेजी से आगे बढ़ाते हैं।

कन्फेडरेशन ऑफ ऑल इंडिया (कैट) के राष्ट्रीय महामंत्री और सांसद प्रवीण खंडेलवाल के अनुसार इस वर्ष दीपावली और उससे जुड़े त्योहारों के दौरान देश भर में 4.2 लाख करोड़ रुपए का कारोबार हुआ है। दशहरा के दौरान करीब पचास हजार करोड़ रुपये का कारोबार हुआ।

एसोचेम ने भी भारत के विभिन्न त्योहारों और भारतीय अर्थव्यवस्था पर उसके प्रभाव का अनुमान लगाते हुए कुछ आँकड़े प्रस्तुत किए हैं। इन आँकड़ों के अनुसार दुर्गा पूजा के दौरान भारत में लगभग 35 प्रतिशत सीएजीआर के साथ करीब 40 हजार करोड़ रुपए का कारोबार होता है। सबसे ज्यादा कारोबार पश्चिम बंगाल में होता है। दुर्गा पूजा के पंडालों में विज्ञापन और सांस्कृतिक कार्यक्रमों सहित समग्र त्योहार के प्रबंधन के लिए दुनिया भर की इवेंट मैनेजमेंट कंपनियाँ लगी हुई हैं। इस पर्व के दौरान खाने-पीने की वस्तुओं

की खरीद बिक्री से भी करोड़ों रुपये का कारोबार होता है। इसी तरह गणेश चतुर्थी के दौरान 10 दिनों तक चलने वाले उत्सव की अवधि में 20 प्रतिशत सीएजीआर के साथ लगभग 20 हजार करोड़ रुपए के कारोबार का अनुमान लगाया गया है। विशेष रूप से महाराष्ट्र और तेलंगाना में सबसे ज्यादा व्यापार होता है। ये त्योहारी मौसम के साथ-साथ पूरे साल 20 हजार से अधिक परिवारों को रोजगार प्रदान करता है। इसी तरह बिहार के छठ पर्व में भी बड़ा कारोबार होता है। बिहार के बाहर रहने वाले लोग छठ पर्व के अवसर पर अपने घर जरूर आते हैं और इसके लिए वो लगभग 20 से 30 प्रतिशत का व्यय भार सहर्ष वहन करते हैं। इस दौरान बड़ी मात्रा में खरीदारी भी होती है। एक अनुमान अनुसार भारत का प्रत्येक परिवार त्योहारों के दौरान 20 से 30 प्रतिशत अतिरिक्त खर्च करता है। त्योहारों के दौरान कारोबार से जो लाखों करोड़ों रुपये के सामान बिकते हैं, उससे सिर्फ उद्योगपति या दुकानदारों को ही फायदा नहीं होता है, बल्कि बड़े पैमाने पर कारीगरों, शिल्पकारों और श्रमिकों को भी रोजगार मिलता है। पांडाल निर्माण से लेकर मूर्ति निर्माण तक, सजावट, कपड़ा, बिजली व्यवस्था, फलफूल और अन्य सेवाओं से जुड़े विभिन्न लोगों और व्यवसायियों को भारी मात्रा में काम मिलता है।

आज के युग में सारी दुनिया घरों में कैद हो रही है। मोबाइल की लत और जीवन की आपाधापी ने सामूहिकता और सहकार की भावना को लगभग खत्म कर दिया है। संपन्नता तो आई है लेकिन एकाकीपन के कारण बड़ी संख्या में लोग अवसाद का शिकार हो रहे हैं। ऐसी अवस्था में ये तीज त्योहार लोग में खुशी और उत्साह का संचार करते हैं।

उत्सव धर्मिता से सामूहिकता और समरसता के साथ सहकार की भावना का विकास होता है। ये पर्व परिवारों को जोड़ते हैं, समाज को जोड़ते हैं और लोगों को घर से बाहर निकलकर सेलेब्रेट करने के लिए

प्रेरित करते हैं। उनमें उत्साह, उमंग, आपसी प्रेम और सौहार्द का संचार करते हैं। तनाव और अवसाद के इस दौर में कुछ क्षण उत्सव आनंद में बिताने से लोग सहज होते हैं जिससे उनकी कार्यक्षमता बढ़ती है। प्रत्यक्ष तौर पर भले ही न दिखे लेकिन परोक्ष तौर पर इससे भी कार्य संस्कृति में सुधार होता है, और निश्चित रूप से उत्पादकता भी प्रभावित होती है।

यह दु:खद है कि कार्य अवधि बढ़ाने के लिए भारत में पर्व त्योहारों की छुट्टियों में लगातार कटौती की जा रही है। इसको लेकर निश्चित तौर पर सरकार को भी सोचने की जरूरत है। त्योहारों और पर्वों की परंपरा कायम रहे इसके लिए विशिष्ट त्योहारों पर छुट्टियों की संख्या बढ़नी चाहिए ताकि लोग दूर देश से अपने गाँव घर आकर अपने परिवार के लोगों के साथ त्योहार को मना सकें। हाल के दिनों में छुट्टियों की कटौती की परंपरा चल पड़ी है। एक दो दिन की छुट्टियों में लोग अपने त्योहारों को परिवार के साथ नहीं मना पाते और एकाकी रहते हुए महज पर्व की औपचारिकता निभाते हैं। यदि हमारी परम्पराओं को जीवित रखना है तो सरकार को इस पर ध्यान देना होगा। यदि कर्मी/कामगार खुश रहेंगे तो निश्चित तौर पर उनकी कार्यक्षमता बढ़ेगी और त्योहार इस खुशी में प्रेरक का काम कर सकते हैं। निजी कंपनियों को भी इस पर ध्यान देने की जरूरत है। पर्वों की छुट्टियों में कटौती न करके कार्य अवधि को किसी और तरह से बढ़ाया जा सकता है।

भारतीय त्योहार आडंबर या पाखंड नहीं बल्कि सामाजिक चेतना और ऊर्जा का प्रवाह बनाए रखने के बड़े स्रोत हैं। दुख की बात यह है कि आज के युवाओं में त्योहारों को मनाने की प्रवृति कम हो रही है। यही कारण है कि कई छोटे-छोटे त्योहारों का अस्तित्व मिट गया है। जो बचे हैं उनको लेकर भी संशय पैदा किया जा रहा है। इस भ्रम को तोड़ने की जरूरत है। त्योहारों को लेकर जागरूकता पैदा करना जरूरी है। युवाओं को इसके फायदों को समझाना होगा उन्हें ये बताना होगा कि हमारे पर्व किस तरह हमारे जीवन, हमारे समाज और देश में सकारात्मकता का संचार करते हैं।

एक बात कहना आवश्यक है कि हमारे त्योहारों के चलते देश की अर्थव्यवस्था को जो गति मिलती है उसको संभालने की आवश्यकता है, क्योंकि चीन जैसे अनेक देश हमारी त्योहारी अर्थव्यवस्था का फायदा उठाने के लिए पूरा जोर लगा रहे हैं। कहीं ऐसा ना हो इन स्थितियों का लाभ हमारे देश के बजाय दूसरी जगह चला जाए। बाजार में बने रहने के लिए कौशल का परिमार्जन जरूरी है। भारतीय उत्पादों को विश्व स्तरीय प्रतिस्पर्धा के अनुकूल बनाने के लिए प्रोत्साहन और प्रशिक्षण की आवश्यकता है। सरकार को इस पर अवश्य ध्यान देना चाहिए। ❑

भारतीय त्योहारों का मनोवैज्ञानिक महत्त्व

डॉ. अश्विनी कुमार
सहायक आचार्य
मनोविज्ञान संकाय,
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इग्नू, मैदान गढ़ी, नई दिल्ली

भारत अपनी विविधता और सांस्कृतिक समृद्धि के लिए मशहूर है, जहाँ हर मौसम, हर क्षेत्र और हर धर्म से जुड़े त्योहार एक अलग जोश और रंगत लेकर आते हैं। लेकिन क्या ये त्योहार केवल परंपराओं का हिस्सा हैं? बिल्कुल नहीं! ये हमारी मानसिक सेहत और सामाजिक जुड़ाव पर गहरा असर डालते हैं। सोचिए, जब हम परिवार और दोस्तों के साथ त्योहार मनाते हैं, तो रिश्ते और मजबूत हो जाते हैं। रंगोली बनाना, स्वादिष्ट पकवान तैयार करना, या पारंपरिक परिधान पहनना – ये सब सिर्फ रस्में नहीं हैं, बल्कि हमारी रचनात्मकता को जगाने वाले पल हैं। नाच-गाने और सांस्कृतिक गतिविधियां हमें खुशी से भर देती हैं और तनाव को कहीं पीछे छोड़ देती हैं। विज्ञान भी इस बात की पुष्टि करता है – त्योहारों के दौरान जो खुशी और उत्साह हम महसूस करते हैं, वह शरीर में 'खुशी के हार्मोन' यानी एंडॉर्फिन और डोपामिन का स्तर बढ़ा देता है, जिससे हम खुद को बेहतर महसूस करते हैं। यही नहीं, ये उत्सव हमें हमारी जड़ों और मूल्यों से जोड़ते हैं, आत्मिक संतोष देते हैं और हमारे जीवन को गहराई और सुकून से भरते हैं। त्योहारों की यही खूबसूरती है – ये केवल उत्सव नहीं, बल्कि हमारे जीवन को खास बनाने का माध्यम हैं।

त्योहारों का मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव

त्योहारों का मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव मनोविज्ञान और तंत्रिका विज्ञान (न्यूरोसाइंस) के कई सिद्धांतों से गहराई से जुड़ा हुआ है। सकारात्मक मनोविज्ञान (पॉजिटिव साइकोलॉजी) के अनुसार, त्योहार हमें ऐसे अनुभव प्रदान करते हैं, जो खुशी और सकारात्मक भावनाओं को बढ़ाते हैं, और हमारे समग्र मानसिक स्वास्थ्य (कल्याण) को मजबूत करते हैं। जब हम सामूहिक उत्सवों में भाग लेते हैं, तो यह सामाजिक जुड़ाव सिद्धांत (सोशल बॉन्डिंग थ्योरी) का समर्थन करता है, जिसमें समूह की गतिविधियां हमारे शरीर में 'जुड़ाव हार्मोन' ऑक्सिटोसिन का स्राव बढ़ाती हैं। इससे न केवल आपसी संबंध मजबूत होते हैं, बल्कि सामुदायिक भावना भी प्रबल होती है।

डोपामिनर्जिक रिवार्ड सिस्टम के अनुसार, त्योहारों के दौरान आनंद और प्रेरणा का अनुभव होता है, क्योंकि मस्तिष्क में डोपामिन का स्तर बढ़ता है। सजावट, संगीत, और सामूहिक नृत्य जैसी गतिविधियां मस्तिष्क के सेंसरी स्टिमुलेशन को सक्रिय करती हैं, जो तनाव हार्मोन कोर्टिसोल को कम करके हमें शांति और

 ISSN 2581-4133

संतोष का अनुभव कराती हैं।

आध्यात्मिक त्योहारों में ध्यान, पूजा और अनुष्ठान के जरिए सचेतनता (माइंडफुलनेस) का अभ्यास होता है, जो मानसिक शांति और तनाव प्रबंधन में सहायक होता है। मास्लो की आवश्यकता श्रेणी (मास्लो'स हायरार्की ऑफ नीड्स) के संदर्भ में, त्योहार हमारी मूल सामाजिक आवश्यकताओं (संबंध और प्रेम की आवश्यकता) को पूरा करने के साथ-साथ आत्मसिद्धि (सेल्फ-एक्चुअलाइजेशन) की भावना भी प्रदान करते हैं। यह हमें हमारी सांस्कृतिक पहचान और मूल्यों से गहराई से जोड़ने का अवसर देता है।

इस प्रकार, त्योहार केवल परंपराओं और धार्मिक अनुष्ठानों का हिस्सा नहीं हैं, बल्कि मानसिक स्वास्थ्य को बढ़ावा देने वाले और जीवन को अर्थपूर्ण बनाने वाले एक शक्तिशाली मनोवैज्ञानिक उपकरण के रूप में कार्य करते हैं।

आध्यात्मिक और मानसिक संतुलन

आध्यात्मिकता और मानसिक संतुलन का गहरा संबंध मनोविज्ञान और तंत्रिका विज्ञान (न्यूरोसाइंस) के सिद्धांतों से स्पष्ट किया जा सकता है। त्योहारों के दौरान की जाने वाली आध्यात्मिक प्रथाएँ; जैसे- प्रार्थना, ध्यान और आत्ममंथन, सचेतनता (Mindfulness) और संज्ञानात्मक पुनर्मूल्यांकन (Cognitive Reappraisal) को बढ़ावा देती हैं, जो मानसिक शांति और भावनात्मक स्थिरता प्रदान करती हैं। स्वनिर्धारण सिद्धांत (Self-Determination Theory) के अनुसार, आध्यात्मिकता आंतरिक प्रेरणा को बढ़ाती है और व्यक्ति को जीवन के उद्देश्य और अर्थ से जोड़ती है।

ध्यान और प्रार्थना जैसे आध्यात्मिक अभ्यास पैरासिम्पेथेटिक नर्वस सिस्टम को सक्रिय करते हैं, जिससे हृदय गति धीमी होती है और तनाव हार्मोन कोर्टिसोल का स्तर कम होता है। यह प्रक्रिया व्यक्ति के मानसिक संतुलन को बनाए रखने में सहायक होती है। अतिक्रमण सिद्धांत (Transcendence Theory) के अनुसार, आध्यात्मिकता व्यक्ति को उसके अहंकार (Ego) से परे ले जाकर आत्मा की शांति और मानसिक सुदृढ़ता प्रदान करती है। आध्यात्मिक अनुभव मस्तिष्क के डिफॉल्ट मोड नेटवर्क (Default Mode Network) को सक्रिय करते हैं, जो आत्मचिंतन और गहन सोच से जुड़े होते हैं, और यह प्रक्रिया मानसिक संतुलन बनाए रखने में सहायक होती है।

भारत के कई त्योहार आध्यात्मिकता को प्रोत्साहित करते हैं और व्यक्ति के मन और आत्मा को शांति और संतुलन प्रदान करते हैं। इनमें कुछ प्रमुख त्योहार हैं -

दीपावली - दीपावली के दौरान प्रार्थना, लक्ष्मी पूजन और ध्यान का विशेष महत्व है। यह आत्मनिरीक्षण का समय होता है, जब नकारात्मकता को त्यागकर नई ऊर्जा और सकारात्मकता को अपनाया जाता है। घर की सफाई और दीयों का प्रज्वलन आत्मा के प्रकाश का प्रतीक है।

महाशिवरात्रि - इस दिन रातभर भगवान शिव की पूजा, ध्यान और मंत्र जाप किए जाते हैं। यह योग और ध्यान के माध्यम से आत्मा को उच्च स्तर पर ले जाने का अवसर प्रदान करता है।

गुरु पूर्णिमा - गुरु के प्रति आभार व्यक्त करने का यह पर्व ध्यान और साधना के अभ्यास के लिए प्रेरित करता है। यह आत्मनिरीक्षण और ज्ञान के मार्ग पर चलने का समय है।

राम नवमी - भगवान राम के जन्म का यह त्योहार ध्यान, भजन और रामायण के पाठ के माध्यम से आंतरिक शुद्धता और शांति को अनुभव कराने का अवसर प्रदान करता है।

नवरात्रि - नौ दिन तक देवी दुर्गा की पूजा, उपवास और ध्यान से आत्मा को शक्ति और शुद्धता प्राप्त होती है। यह समय मन और आत्मा के संतुलन के लिए अत्यधिक महत्त्वपूर्ण होता है।

भारतीय त्योहार केवल परंपराओं और सांस्कृतिक विरासत का हिस्सा नहीं हैं, बल्कि हमारे मानसिक, सामाजिक और भावनात्मक स्वास्थ्य को सुदृढ़ करने वाले महत्वपूर्ण साधन हैं। ये उत्सव हमें एकजुटता, सकारात्मकता और जीवन के प्रति नई दृष्टि प्रदान करते हैं। त्योहारों के माध्यम से हम सामूहिक खुशी, सांस्कृतिक गर्व और आध्यात्मिक संतुलन का अनुभव करते हैं, जो हमारे मानसिक स्वास्थ्य को समृद्ध करता है।

बुद्ध पूर्णिमा – गौतम बुद्ध के जन्म और ज्ञान प्राप्ति के इस पर्व पर ध्यान और मौन का अभ्यास आत्मनिरीक्षण और मानसिक शांति को बढ़ावा देता है।

कार्तिक पूर्णिमा – इस दिन गंगा स्नान, ध्यान और दीपदान आत्मशुद्धि और आध्यात्मिक उन्नति का प्रतीक हैं।

इन त्योहारों के माध्यम से किए गए आध्यात्मिक अभ्यास व्यक्ति के मानसिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक स्वास्थ्य को सुदृढ़ करते हैं। यह न केवल तनाव और अस्थिरता से मुक्ति प्रदान करते हैं, बल्कि मानसिक और भावनात्मक स्थिरता को भी प्रोत्साहित करते हैं। इस प्रकार, आध्यात्मिकता और मानसिक स्वास्थ्य का गहरा तालमेल हमारे जीवन को संतुलित, अर्थपूर्ण और उद्देश्यपूर्ण बनाता है।

भारतीय त्योहार – जीवन के प्रति नई दृष्टि का विकास

भारतीय त्योहार केवल उत्सव और परंपराओं का हिस्सा नहीं हैं, बल्कि ये जीवन के प्रति एक नई दृष्टि विकसित करने में सहायक होते हैं। मनोविज्ञान के दृष्टिकोण से, त्योहार व्यक्ति को अपने दैनिक जीवन की एकरसता से बाहर निकालते हैं और उसे जीवन के गहरे अर्थ को समझने का अवसर प्रदान करते हैं। त्योहारों के दौरान अनुभव की जाने वाली खुशी, सामुदायिक जुड़ाव, और सांस्कृतिक गर्व न केवल हमारी आत्मा को प्रफुल्लित करते हैं, बल्कि जीवन को एक नई ऊर्जा और उत्साह के साथ देखने के लिए प्रेरित करते हैं।

त्योहारों के दौरान होने वाली गतिविधियां, जैसे कि पूजा, अनुष्ठान, सामूहिक नृत्य और गीत, positive reinforcement के माध्यम से हमें यह सिखाती हैं कि जीवन में छोटी-छोटी खुशियों का आनंद कैसे लिया जाए। Cognitive Behavioral Theory के अनुसार, यह दृष्टिकोण हमें सकारात्मक सोच को बढ़ावा देता है और समस्याओं के प्रति नए समाधान-आधारित दृष्टिकोण को विकसित करता है। इसके अलावा, त्योहार mindfulness का अभ्यास भी कराते हैं। पारंपरिक अनुष्ठानों, सजावट, और सामूहिक भोज जैसे कार्य हमें वर्तमान क्षण में जीने और जीवन की क्षणभंगुरता का सम्मान करने की शिक्षा देते हैं। Resilience Theory के अनुसार, त्योहार हमें कठिनाइयों और जीवन के संघर्षों के बावजूद आशा और विश्वास बनाए रखने में मदद करते हैं।

इस प्रकार, भारतीय त्योहार केवल परंपराओं का पालन नहीं, बल्कि जीवन के प्रति नई दृष्टि विकसित करने का माध्यम हैं, जो हमें खुशी, संतुलन और अर्थपूर्ण जीवन जीने के लिए प्रेरित करते हैं।

निष्कर्ष

भारतीय त्योहार केवल परंपराओं और सांस्कृतिक विरासत का हिस्सा नहीं हैं, बल्कि हमारे मानसिक, सामाजिक और भावनात्मक स्वास्थ्य को सुदृढ़ करने वाले महत्वपूर्ण साधन हैं। ये उत्सव हमें एकजुटता, सकारात्मकता और जीवन के प्रति नई दृष्टि प्रदान करते हैं। त्योहारों के माध्यम से हम सामूहिक खुशी, सांस्कृतिक गर्व और आध्यात्मिक संतुलन का अनुभव करते हैं, जो हमारे मानसिक स्वास्थ्य को समृद्ध करता है।

मनोविज्ञान के दृष्टिकोण से, त्योहार न केवल तनाव और अवसाद को कम करने में सहायक होते हैं, बल्कि हमें आत्मनिरीक्षण, रिश्तों को मजबूत करने, और जीवन के प्रति आभार व्यक्त करने का अवसर भी प्रदान करते हैं। ये उत्सव हमें जीवन की अनमोलता का एहसास कराते हैं और हमें सिखाते हैं कि चुनौतियों के बीच भी आशा और उल्लास कैसे बनाए रखा जा सकता है।

इस प्रकार, भारतीय त्योहार हमारे व्यक्तिगत और सामूहिक जीवन में आनंद, शांति और स्थायित्व का संचार करते हैं, जो उन्हें केवल धार्मिक या सांस्कृतिक नहीं, बल्कि मानसिक और भावनात्मक स्वास्थ्य का आधार भी बनाते हैं। त्योहारों की यह मनोवैज्ञानिक दृष्टि हमें यह समझने में मदद करती है कि कैसे हमारी परंपराएं और रीति-रिवाज हमारी समग्र भलाई में योगदान करती हैं। ❑

दुर्गा पूजा

जितेन्द्र भाई गोर्धनभाई चौहान
पीएचडी स्कॉलर और जेआरएफ,
स्कूल ऑफ सोशल साइंसेज
इतिहास विभाग, गुजरात
विश्वविद्यालय, अहमदाबाद

दुर्गा पूजा भारत के प्रमुख और महत्त्वपूर्ण त्योहारों में से एक है, जिसे विशेष रूप से पश्चिम बंगाल, असम, ओडिशा, बिहार और देश के अन्य पूर्वी राज्यों में भव्य रूप से मनाया जाता है। यह त्योहार देवी दुर्गा की महिमा और शक्ति को समर्पित है, जो बुराई पर अच्छाई की विजय का प्रतीक है। दुर्गा पूजा न केवल धार्मिक आयोजन है, बल्कि यह सांस्कृतिक, सामाजिक और भावनात्मक दृष्टिकोण से भी अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। देवी दुर्गा की उपासना के साथ-साथ इस उत्सव में लोक कलाओं, नृत्य, संगीत और सामाजिक मेलजोल का भी प्रमुख स्थान होता है।

देवी दुर्गा का जन्म - किंवदंतियाँ देवी दुर्गा को हिंदू देवगणों में तीन सबसे शक्तिशाली देवों - ब्रह्मा (निर्माता), विष्णु (संरक्षक) और शिव (संहारक)- की रचना के रूप में बताती हैं। दुर्गा के जन्म की कहानी देवी भागवतम् में वर्णित है। माँ दुर्गा की उत्पत्ति असुरों के राजा रंभ के पुत्र महिषासुर के वध से जुड़ी हुई है। पुराणों के मुताबिक, राक्षसराज महिषासुर ने तपस्या कर ब्रह्मा जी को प्रसन्नकर वरदान प्राप्त किया कि वह जब चाहे विकराल और भयंकर भैंसे का रूप धारण कर सके। इसके अलावा उसने वरदान पाया कि उसे कोई भी देवता या दानव युद्ध में हरा नहीं पाएगा। वरदान मिलने से महिषासुर बलशाली होने के साथ ही अंहकारी भी हो गया था। उसने स्वर्ग पर हमला किया और देवताओं को हराकर कब्जा कर लिया था। भगवान शिव और भगवान विष्णु भी उसे युद्ध में नहीं हरा पाए।

महिषासुर की शक्ति, अहंकार और अत्याचार लगातार बढ़ते चले गए। उसका आतंक तीनों लोकों में फैलने लगा। सभी देवी-देवता और ऋषि-मुनि उसके अत्याचारों से परेशान होने लगे थे। तब भगवान शिव और भगवान विष्णु ने सभी देवताओं से सलाह लेते हुए एक ऐसी योजना बनाई, जिसमें एक शक्ति को प्रगट कर महिषासुर का वध किया जा सके। सभी देवताओं ने एकसाथ मिलकर एक तेज के रूप में शक्तिस्वरूपा माँ दुर्गा को प्रकट

किया। सभी देवताओं की शक्तियों को एकसाथ एक जगह इकट्ठा करने से एक आकृति की उत्पत्ति हुई। सभी देवताओं की इस शक्ति को शिवजी ने त्रिशूल, विष्णु जी ने चक्र, ब्रह्मा जी कमल का फूल, वायु देवता से नाक व कान, पर्वतराज से वस्त्र और शेर मिला। यमराज के तेज से माँ शक्ति के केश बने, सूर्य के तेज से पैरों की अंगुलियाँ, प्रजापति से दाँत और अग्निदेव से आँखें मिली। इसके अलावा सभी देवताओं ने अपने शस्त्र और आभूषण उन्हें दिए। पुराणों के मुताबिक, देवताओं के तेज और शस्त्र पाकर जो देवी प्रगट हुई, वो तीनों लोकों में अजेय और दुर्गम बनी। युद्ध में बहुत भंयकर और दुर्गम होने के कारण इनका नाम माँ दुर्गा पड़ा। इसके बाद शक्ति रूपी माँ दुर्गा और महिषासुर के बीच 9 दिन तक युद्ध हुआ। फिर नौवें दिन देवी दुर्गा ने राक्षसराज महिषासुर का वध कर दिया। जिन नौ दिनों तक माँ दुर्गा ने महिषासुर के साथ युद्ध किया, वही आज चैत्र नवरात्रि के रूप में मनाए जाते हैं।

पूजा का इतिहास – आश्विन (सितंबर-अक्टूबर) के महीने में मनाई जाने वाली दुर्गा पूजा विशेष रूप से पश्चिम बंगाल के सबसे प्रतीक्षित त्योहारों में से एक है। एक आराध्य के रूप में देवी की उत्पत्ति बहुत समय पहले की है। देवी का उल्लेख समय के साथ, हमें वैदिक युग के विभिन्न ग्रंथों और रामायण एवं महाभारत में भी मिलता है। इसके बाद भी, 15वीं शताब्दी

दुर्गा पूजा भारत के प्रमुख और महत्त्वपूर्ण त्योहारों में से एक है, जिसे विशेष रूप से पश्चिम बंगाल, असम, ओडिशा, बिहार और देश के अन्य पूर्वी राज्यों में भव्य रूप से मनाया जाता है। यह त्योहार देवी दुर्गा की महिमा और शक्ति को समर्पित है, जो बुराई पर अच्छाई की विजय का प्रतीक है। दुर्गा पूजा न केवल धार्मिक आयोजन है, बल्कि यह सांस्कृतिक, सामाजिक और भावनात्मक दृष्टिकोण से भी अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। देवी दुर्गा की उपासना के साथ-साथ इस उत्सव में लोक कलाओं, नृत्य, संगीत और सामाजिक मेलजोल का भी प्रमुख स्थान होता है।

में कृत्तिवासी द्वारा रचित रामायण के वर्णन के अनुसार रावण संग युद्ध से पहले भगवान राम द्वारा दुर्गा की पूजा 108 नील कमल और 108 पवित्र दीपों से की जाती है। जिस दिन भगवान राम ने रावण को हराया था उस दिन को दशहरे के रूप में मनाया जाता है जो दुर्गा पूजा के दसवें दिन (दशमी) को पड़ता है। लगभग 16वीं शताब्दी के साहित्य में हमें पश्चिम बंगाल में ज़मींदारों (भूमि मालिकों) द्वारा दुर्गा पूजा के भव्य उत्सव के प्रथम उल्लेख मिलते हैं। विभिन्न आलेख अलग-अलग राजाओं और ज़मींदारों की ओर इशारा करते हैं जिन्होंने पूरे गाँव के लिए दुर्गा पूजा मनाई और उनका वित्त पोषण किया। बोइन्दो बारिरी पूजो (ज़मींदारों के घर में पूजा) अभी भी बंगाल में एक प्रथा है। बड़े घराने, लोगों के आगमन और देवी दुर्गा की प्रार्थना के लिए, मूर्ति को अपनी हवेलियों के आँगन में रखते हैं।

कोलकाता के सबसे प्रसिद्ध संस्थानों में से एक बेलूर मठ है। रामकृष्ण मठ और मिशन का मुख्यालय, बेलूर मठ, स्वामी विवेकानंद द्वारा स्थापित किया गया था। हुगली नदी के पश्चिमी तट पर स्थापित यह मठ एक बहुत लोकप्रिय दुर्गा पूजा का आयोजन करता है। यहाँ पहली दुर्गा पूजा 1901 में स्वामी विवेकानंद ने खुद आयोजित की थी। प्रारंभ में, एक छोटे से पंडाल के अंदर मनाई जाने वाली बेलूर मठ की दुर्गा पूजा अब हर साल हज़ारों लोगों को आकर्षित करती है।

देवी की मूर्ती का निर्माण – अनेक बार देवी के विभिन्न रूपों में कल्पना की गई, फिर भी पुराणों में उन्हें एक निराकार सर्वोच्च शक्ति का रूप बताया गया है। देवी पुराण में, जब महिषासुर और माँ दुर्गा के बीच टकराव होता है, तब वह स्वयं को 'आदि पराशक्ति' या 'निराकार शक्ति' कहती हैं। तथापि, हमारे पवित्र ग्रंथों के साथ-साथ चित्रों में देवी की आभा और सुंदरता का वर्णन है। इस प्रकार, पूजा के लिए मूर्ति का निर्माण पूजा से कुछ दिन पहले रेत और मिट्टी के मिश्रण की कला से कहीं अधिक है। यह प्रेम और भक्ति है जो किसी भी बुराई को दूर करने के लिए एक उग्र रूप लेती हुई ऊर्जा के सर्वोच्च रूप को बनाने में सम्मिलि की जाती है। कला का यह रूप कुमारतुलि में साल भर चलता है! कुमारतुली उत्तरी कोलकाता का एक इलाका है जहाँ मूर्ति निर्माण की विरासत है।

दुर्गा की मूर्ति बनाने के लिए जिन मुख्य घटकों का उपयोग किया जाता है, उनमें बाँस, पुआल, भूसी और पुण्य माटी शामिल

हैं। पुण्य माटी पवित्र गंगा नदी के किनारे की मिट्टी, गोबर, गोमूत्र और वेश्यालय की मिट्टी, जिसे 'निशिद्धो पल्ली' या निषिद्ध प्रदेश भी कहा जाता है, का मिश्रण होती है। वेश्यालयों की मिट्टी का उपयोग करने के इस सदियों पुराने अनुष्ठान के कई अर्थ हैं। ऐसा कहा जाता है कि जब कोई व्यक्ति पाप करने के लिए निषिद्ध क्षेत्रों में प्रवेश करता है, तो वह अपने गुणों को दरवाज़े पर छोड़ देता है। इसलिए इस मिट्टी को शुद्ध और पुण्य कहा जाता है। वेदों पर आधारित एक अन्य परिप्रेक्ष्य यह है कि महिलाएँ नौ वर्गों के अंतर्गत आती हैं, इन्हें नवकनिया के रूप में जाना जाता है और दुर्गा पूजा के दौरान माँ दुर्गा के साथ इन्हें पूजा जाता है। नटी (नर्तक) के साथ-साथ वेश्या (तवायफ़) भी नवकन्याओं में शामिल हैं। इस प्रकार, उनके दरवाज़े की मिट्टी का उपयोग पूजा के दौरान उन्हें दिए गए सम्मान का प्रतीक है। कारण चाहे जो भी हो, सदियों पुरानी इस परम्परा का आज भी बिना किसी सवाल के पालन किया जाता है। मूर्ति का निर्माण बाँस की छड़ियों के उपयोग से शुरू होता है ताकि मूर्ति को एक निश्चित आकार दिया जा सके। अगला, पुआल और भूसी को शरीर के गठन के लिए एक मूल आकार देने के लिए बाँस की छड़ियों के चारों ओर भरा जाता है। इसके बाद मूर्ति पर मिट्टी की परत चढ़ाई जाती है जो अंत में आदिशक्ति के शारीरिक रूप को परिभाषित करती है। चिकना और मज़बूत रूप देने के लिए, भूसी के साथ मिश्रित चिकनी मिट्टी की एक के ऊपर एक परतें चढ़ाई जाती हैं। माँ दुर्गा का चेहरा मूर्ति का सबसे जटिल हिस्सा होता है। पूजा पंडाल में कभी भी दुर्गा के भाव अनदेखे नहीं रह पाते। उग्र मगर शांत, देवी का चेहरा अत्यधिक सावधानी से चित्रित किया जाता है। मूर्ति को धूप में सुखाने के बाद इसे सबसे चटकीले रंगों में रंगा जाता है!

महालया के दिन - जिस दिन देवी को पृथ्वी पर उतरने के लिए आमंत्रित किया जाता है - कारीगर माँ दुर्गा की मूर्ति पर आँखों को चित्रित करते हैं। यह अंतिम

स्पर्श चौखू दान नामक रिवाज़ के रूप में देवी को दिया जाता है। जब दुर्गा घर आती हैं, तो वह अकेली नहीं आतीं हैं। माना जाता है कि दुर्गा अपने साथ अपने चार बच्चों - गणेश, कार्तिकेय, लक्ष्मी और सरस्वती - के साथ आती हैं, जिन्हें उनके आस-पास रखा जाता है। जबकि कुछ इस पर विश्वास करते हैं, अन्य लोगों के पास इससे असहमत होने के कारण हैं। भारतीय संस्कृति के कुछ शोधकर्ताओं का तर्क है कि उनके पार्श्व में स्थित मूर्तियाँ उनके बच्चे नहीं हैं बल्कि उनके गुण धर्म हैं जिन्हें एक भौतिक रूप दिया गया है। बहरहाल, इन चारों देवी-देवताओं की मूर्तियों को भी दुर्गा की मूर्ति की समान विधि से बनाया जाता है और उन्हें उनके बगल में रखा जाता है। एक और महत्त्वपूर्ण मूर्ति असुर, महिषासुर की होती है, एक डरावनी अभिव्यक्ति के साथ जब कि देवी हाथों में अस्त्र धारण किये उग्र भाव से नीचे असुर की तरफ देखती है। आमतौर पर माँ दुर्गा को दस भुजाओं के साथ देखा जाता है, लेकिन महालक्ष्मी (दुर्गा का एक रूप) को देवी भागवतम् पुराण के अनुसार अठारह भुजाओं वाला माना जाता है। माँ दुर्गा की प्रत्येक भुजा उनके निर्माण के समय देवों द्वारा उन्हें दी गई वस्तुओं को धारण करती है। इन सभी वस्तुओं की पूजा आरती के दौरान की जाती है।

पंडाल - पंडाल उन दिनों के लिए देवी के निवास स्थान होते हैं जिन्हें वह अपने परिवार और भक्तों के साथ बिताती है। पूजा के प्रत्येक दिन देवी की आराधना के लिए आने वाले अत्यधिक संख्या में लोगों को एकत्रित करने के लिए अस्थायी मंडप के रूप में निर्मित पंडालों को शहर के चारों ओर बनाया जाता है। पंडालों का निर्माण बाँस के विशाल खंभों को बाँधकर किया जाता है और फिर उन पर कपड़ा लपेटा जाता है। पहले के समय में, कुलीन परिवार अपनी हवेलियों में पूजा मनाया करते थे। केंद्रीय प्रांगण को साफ किया जाता था और देवी की मूर्ति को रखने के लिए सजाया जाता था। देवी की प्रार्थना करने के लिए चारों ओर से लोग घर में इकट्ठा होते थे। धीरे-धीरे, समय के साथ, पंडाल बढ़ने लगे और अब वे त्योहारों के मौसम के दौरान कॉलोनियों, उद्यानों या सड़कों पर भी स्थापित किए जाते हैं। पंडाल भ्रमण (एक के बाद एक पंडाल जाना) अब एक प्रतिमान है। सुंदर कपड़े पहने लोग एक पंडाल से दूसरे पंडाल में जाते हैं और प्रत्येक पंडाल में रखी देवी की प्रतिमा को निहारते हुए दोस्तों और परिवार से मिलते हैं। जैसे-जैसे साल बीतते गए, पंडालों की महिमा बढ़ती गई। एकल रंग के मंडप से लेकर विषयवस्तु वाले बाहरी और आंतरिक प्रतिरूप तक, पंडाल अपने आप में देखने लायक स्थान बन गए हैं। जैसे-जैसे रात होती है और व्यस्तता बढ़ती है, तब चमकते हुए पंडाल सिर्फ एक स्थान बन कर नहीं रह जाते हैं - यह परिवार और

दोस्तों से मिलने और जश्न मनाने की जगह बन जाते हैं!

रीति-रिवाज़ - महालया पितृ पक्ष श्राद्ध (हमारे पूर्वजों को श्रद्धांजलि देने की 16 दिन की अवधि) और शुभ दुर्गा पूजा की शुरुआत का प्रतीक है। इस दिन को देवी का अपनी माँ के घर की ओर यात्रा की शुरुआत माना जाता है। सुबह आप बंगाली कॉलोनियों में रेडियो या टेलीविज़न से आने वाली चंडी पाठ की एकीकृत ध्वनि सुन सकते हैं।

छठा दिन या षष्टी देवी माँ के अपने निवास में प्रवेश को चिह्नित करता है। माँ दुर्गा अपने पंडाल में भगवान गणेश, भगवान कार्तिकेय, देवी लक्ष्मी और देवी सरस्वती के जुलूस का नेतृत्व संपूर्ण शोभा से करती हैं। चमकीले आभूषण, चमकीली साड़ी और सिंदूर से सुशोभित, देवी ढाकियों के साथ होती हैं (ढाक वादक - ढाक दो लकड़ी की छड़ियों का उपयोग करके बजाया जाने वाला ढोल जैसा वाद्य होता है)। ढाक की आवाज़ दिल की धड़कन बढ़ा देती है और जुलूस में एक उन्माद जोड़ती है। शाम को बोधोन होता है। बोधोन पूजा के सातवें, आठवें और नौवें दिन देवी दुर्गा के जागरण को कहते हैं। देवी के चेहरे का अनावरण एक औपचारिक पूजा के साथ बोधोन के दौरान होता है।

सातवें दिन या सप्तमी के समारोह भोर से पहले शुरू होते हैं। दिन के लिए अनुष्ठान 'कोला बाऊ' (केले की दुल्हन) या 'नाबापत्रिका स्नान' नामक भोर से पूर्व स्नान के साथ शुरू होते हैं। कोला बाऊ, जिन्हें गणेश की पत्नी माना जाता है, की व्याख्या स्वयं देवी दुर्गा के रूप में की जाती है। जैसा कि दुर्गा को कृषि की देवी के रूप में भी जाना जाता है, कोला बाऊ को देवी दुर्गा के नौ प्राकृतिक पौधों के रूपों द्वारा दर्शाया जाता है। जब सभी एक साथ बँधे होते हैं, तो केले का पत्ता एक नवविवाहित दुल्हन के घूँघट की तरह दिखता है जिससे वह अपना चेहरा शर्म से छिपा लेती हैं। जैसे-जैसे पुजारी मंत्रोच्चारण करते हैं, कोला बाऊ को तब नदी में स्नान कराया जाता है। एक नई साड़ी उनके चारों ओर लपेटी जाती है और उन्हें गणेश के दाईं ओर रखा जाता है।

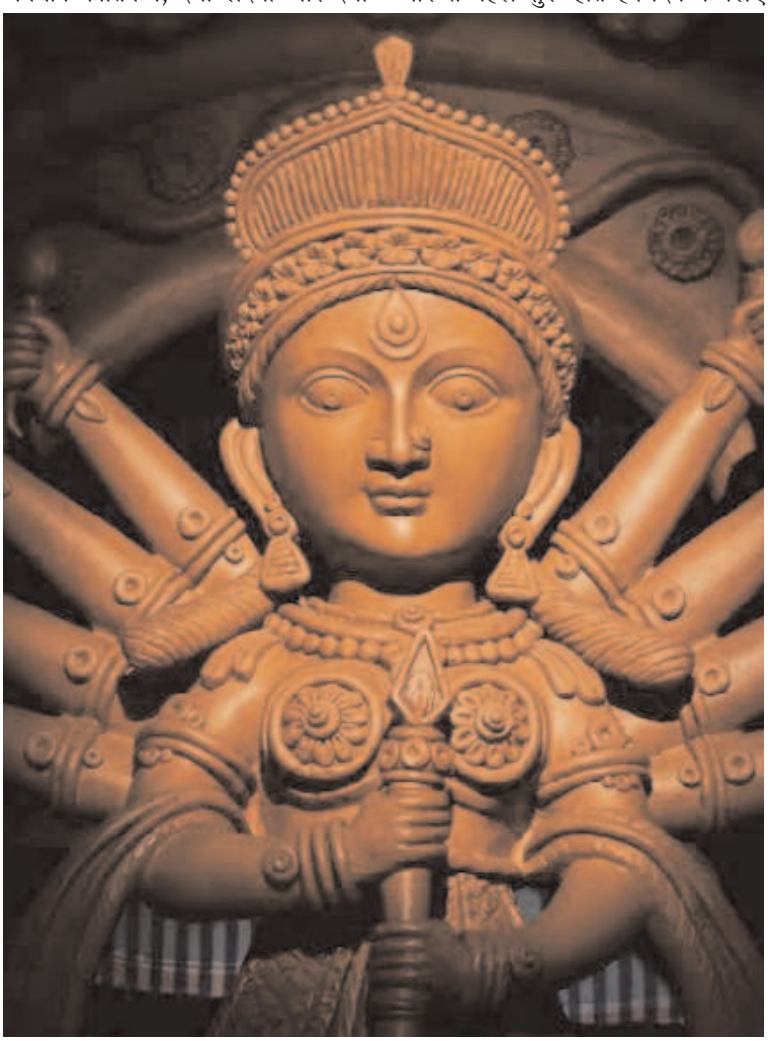

आठवाँ दिन - अष्टमी या महा दुर्गाष्टमी रंग, कार्यक्रम और भव्यता का दिन है। नए खरीदे गए कुर्तों, साड़ियों और मेल खाते हुए आभूषण पहने लोग पंडाल की ओर जाते हैं और दिन भर पूजा अर्चना करते हैं। जैसे-जैसे दिन सोंधी आरती के निकट आता है, सड़क पर भीड़ और सघन होती जाती है। इस दिन, अलग-अलग रंगों के झंडों के साथ नौ छोटे बर्तन, प्रत्येक अलग-अलग शक्तियों (ऊर्जा) के लिए, स्थापित किए जाते हैं और नौ शक्तियों का आह्वान और उनकी पूजा की जाती है। पंडालों में लोग अंजोली देने के लिए दुर्गा की मूर्ति के पास जाते हैं। यहाँ बेल पाता (बेल के पत्तों) के साथ फूल की पंखुड़ियों को भक्तों के बीच वितरित किया जाता है, जिसे वे पुजारी द्वारा मंत्र पढ़ते समय पकड़े रहते हैं। फिर फूलों को एकत्र किया जाता है और देवी के चरणों में चढ़ाया जाता है। अंजोली सप्तमी, अष्टमी के साथ-साथ नवमी के अनुष्ठानों का एक हिस्सा है। इसके बाद कुमारी पूजा होती है जहाँ युवा, अविवाहित लड़कियाँ, जो अभी तक तरुणावस्था में नहीं पहुँची हैं, देवी के रूप में पूजी जाती हैं। लड़कियों की उम्र (एक से सोलह तक) के आधार पर उन्हें दुर्गा के विभिन्न रूपों में पूजा जाता है। एक जीवंत

 ISSN 2581-4133

देवी की तरह दिखने वाली युवा कुमारी को प्रसाद के रूप में फूल, मिठाई और दक्षिणा (उपहार) भेंट की जाती है। महा अष्टमी पर सांधी आरती के लिए भारी भीड़ जुटती है। अष्टमी के अंतिम 24 मिनट और नवमी (नौवें दिन) के पहले 24 मिनट को सोंधी (संधिया) या पवित्र अंतराल माना जाता है। इस पूजा में देवी की उनके चंडी अवतार में आराधना की जाती है। पूजा के दौरान सुनाई जाने वाली मार्कण्डेय पुराण की कथा के अनुसार महिषासुर के साथ युद्ध के दौरान दुर्गा ने दो असुरों - चंड (चंडो) और मुंड (मुंडो) - को मारने के लिए चंडी का रूप लिया था। सोंधी आरती में 108 दीपों को प्रथा के रूप में प्रज्वलित किया जाता है, जबकि ढाकी ढाक बजाते हैं और लोग आरती की ध्वनि पर खुशी से नाचते हैं। इन क्षणों में आप खुद को पूरी तरह से परिवेश में सराबोर महसूस कर सकते हैं। जैसे-जैसे आरती और ढाकी की ताल स्वरोत्कर्ष तक पहुँचती है लोग ताली बजाते हैं और नाचते हैं और फिर आरती पूरी होने के साथ सन्नाटा छा जाता है। पूजा का समापन भोग के वितरण के साथ होता है।

नौवाँ दिन - नवमी, पूजा की श्रृंखलाओं के साथ आगे बढ़ता है। इनमें मुख्य अनुष्ठानों में बलि (बोलि) और होम हैं। देवी को प्रसन्न करने के लिए, बोलि, बलिदान की परंपरा है। अब यह ज्यादातर कद्दू या गन्ने के साथ की जाती है। होम एक अग्नि यज्ञ है जो वैदिक तथा तांत्रिक परंपराओं के समायोजन से होता है। दिन का समापन आरती के साथ-साथ धुनुची-नाच (धुनुची एक बंगाली धूप जलाने वाला बर्तन होता है जिसका उपयोग आनुष्ठानिक पूजा नृत्य के लिए किया जाता है) के साथ होता है।

दसवाँ दिन - दशमी को बिजोय दशमी (दसवें दिन विजय) के रूप में जाना जाता है। इस दिन देवी घर वापस आने के लिए अपनी यात्रा शुरू करती हैं। दिन के सबसे दिलचस्प हिस्सों में से एक सिंदूर खेला (सिंदूर का खेल) है। इसमें विवाहित महिलाएँ देवी को सुपारी, मिठाई और सिंदूर के रूप में बरन (विदाई) देती हैं। इसके बाद महिलाएँ एक-दूसरे की मांग में सिंदूर भरतीं हैं और बाक़ी के सिंदूर को एक-दूसरे के चेहरों पर लगातीं हैं। चूँकि सिंदूर एक विवाहित महिला की निशानी है, इस अनुष्ठान को अपने परिवार के साथ-साथ अपने पतियों के स्वास्थ्य और शांति के लिए देवी की प्रार्थना के समान माना जाता है। लाल-पार-सादा-साड़ी (गहरे लाल किनारी वाली सफेद साड़ी) पहनें और लाल सिंदूर से ढके महिलाओं के चेहरों से उनकी खुशी प्रत्यक्ष दिखाई देती है।

सिंदूर खेला के बाद, देवी की मूर्ति का बिसोर्जन (विसर्जन) दुर्गा पूजा का समापन समारोह होता है। कुछ के लिए माँ को जाते हुए देखना एक भावनात्मक क्षण होता है। माँ दुर्गा की मूर्ति के साथ-साथ नाबापत्रिका को नदी में डूबते हुए अंतिम विदाई देने के लिए भक्तों की भारी भीड़ उपस्थित होती है। विसर्जन स्थल से इकट्ठा किया गया जल (शांति जल) भक्तों पर छिड़का जाता है, जो माँ द्वारा पीछे छोड़ी गई शांति को सम्मिलित करता है। आँखों में आँसू लिए लोग अपने दिलों में बसी देवी के साथ घर लौटते हैं।

पूजा को जीना - दुर्गा पूजा के अनुभव को शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता है। यह एक ऐसी भावना है जिसे लोग जीते हैं। इस उत्सव का वे साल भर इंतज़ार करते हैं। रंगमंच, नृत्य और कला प्रतियोगिता जैसे कई सांस्कृतिक आयोजन पूजा पंडाल में एक आकर्षक आनंददायक दृश्य प्रदान करते हैं। विषयगत रूप से सजाए गए पंडाल विभिन्न सामग्रियों में उत्कृष्ट शिल्प कौशल का प्रदर्शन करते हैं। इस प्रकार, पूजा न केवल माँ के भक्तों, बल्कि सांस्कृतिक कला शैलियों के प्रशंसकों को भी आकर्षित करती है।

आप किसी भी पंडाल की ओर जाने वाली गलियों में कदम रखते ही अपनी सारी इंद्रियों को जाग्रत महसूस कर सकते हैं और इससे पहले कि आप कुछ समझ पाएँ, आप अपने चारों ओर चटक लाल रंगों को एक टक देखते हुए ढाक की आवाज़ पर झूम रहे होते हैं, धुनुची के साथ नाच रहे होते हैं और ताज़ा पके हुए भोग की खुशबू से आनंदित होते हैं! दुर्गा पूजा का सार इन नौ दिनों के दौरान शुद्ध आनंद की भावनाओं में निहित है। परिवार फिर से मिलते हैं, दीदा (दादी) अपने पोते-पोतियों से मिलती हैं, दोस्त हँसी-ठिठोल करते हैं और अनेक प्रकार के भोजन का आनंद लेते हैं। यह सब शहरों में फैले हुए असंख्य पंडालों में देवी की चौकस निगरानी के तहत होता है। यूनेस्को ने कोलकाता में दुर्गा पूजा को अपनी 2021 की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत (Intangible Cultural Heritage) की सूची में सम्मिलित किया है, जिससे 331 साल पुराने शहर और पश्चिम बंगाल राज्य के सबसे बड़े धार्मिक त्योहार को अंतरराष्ट्रीय मान्यता मिली है। ❑

भारत के शस्योत्सव

डॉ. मैथिली प्र. राव
शिक्षाविद एवं स्वतंत्र अनुवादक
बेंगलुरु, कर्नाटक

भारत एक विविधतापूर्ण देश है जिसमें अन्य तत्त्वों के अलावा त्योहारों में भी विविधता इसे समृद्ध बनाती है। लोक प्रथा होने के अलावा ये विभिन्न पौराणिक कहानियों का प्रतिबिंब होते हैं। फसल उत्सव या कृषि उत्सव या शस्योत्सव इन उत्सवों में से एक है, जिसे भारत के विभिन्न राज्यों में मनाया जाता है। अलग-अलग जलवायु और शस्य-स्वरूप के कारण, वर्ष के अलग-अलग समय पर, भारत इन शस्योत्सवों को मनाता है। भारत एक कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था है, जिसकी अधिकांश जनसंख्या कृषि पर निर्भर है और इसकी वृद्धि और समृद्धि का श्रेय धरती माता और प्रकृति को जाता है। इसलिए वे एक मात्र उत्सव ही नहीं, एक सांस्कृतिक दायित्व बन जाते हैं और प्रकृति के प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट करने का एक माध्यम।

भारत में फसल उत्सव एक पारंपरिक उत्सव है जो बढ़ते मौसम के अंत और फसलों के एकत्र होने का प्रतीक है। फसल उत्सव एक वार्षिक उत्सव है जो किसी दिए गए क्षेत्र की मुख्य फसल के समय के आसपास होता है। यह आमतौर पर शरद ऋतु में, फसल के समय के आसपास आयोजित किया जाता है। इसमें धार्मिक समारोह, दावतें और त्यौहार शामिल हैं। फसल उत्सव से जुड़े रीति-रिवाज और परंपराएँ क्षेत्र और संस्कृति के आधार पर अलग-अलग होती हैं, लेकिन उनमें समुदाय के लोग एक साथ होते हैं जो उत्पन्न फसल और मौसम की प्रचुरता के लिए अपना आभार व्यक्त करते हैं।

फसल उत्सव, फसल की कटाई से पूर्व, उसके उगने का हर्षोत्सव मनाने का एक क्षण है। विभिन्न राज्य, समुदाय और धर्म बड़े जोश और उत्साह के साथ इन फसल उत्सवों को मनाते हैं। कुछ लोकप्रिय फसल उत्सव हैं बिहू, पोंगल, लोहड़ी, मकर संक्रांति, ओणम, नुअखै, वैशाखा, छठ, हेमिस, उगादि, गुडी पडवा, विशु का पोम्ब्लान्ग नोन्क्रेम, वन्गल, करम, नबन्ना आदि। यह एक ऐसा तरीका है जिसके माध्यम से किसान अपनी फसलों की प्रचुरता के लिए आभार व्यक्त करते हैं और प्रकृति और सर्वशक्तिमान से आशीर्वाद मांगते हैं।

फसल उत्सव सांस्कृतिक, सामाजिक और धार्मिक पहलुओं को दर्शाने वाले ये उत्सव मानव सभ्यता के लिए ही बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। सर्वप्रथम प्रकृति के प्रति आभार व्यक्त करना ही इन उत्सवों का मुख्य उद्देश्य होता है। इसके अतिरिक्त फसल उगाने में शामिल कड़ी मेहनत और श्रम को पहचानने के लिए; सामुदायिक उत्सव होने के कारण इनसे सामाजिक एवं सांस्कृतिक बंधन के अनुभव के साथ-साथ वे अधिक बलिष्ठ बनाने के लिए ये आवश्यक होते हैं। प्रकृति के प्रति धन्यता भाव प्रकट करने वाले ये उत्सव धार्मिक और आध्यात्मिक महत्त्व भी रखते हैं; प्रतीकात्मक रूप से, प्राकृतिक अवस्थाओं के माध्यस से, ये उत्सव जीवन एवं मृत्यु के चक्र का स्मरण करवाते हैं । अंतत: जब भी फसल की मात्रा कम हो जाए या अभाव हो या चुनौतियाँ अधिक हों तब ये उत्सव हमारी सामुदायिक भावना को बढाते हुए संसाधनों को साझा करने के मूल्य का पाठ पढ़ाते हैं।

मकर सक्रांति - भारत के सबसे महत्त्वपूर्ण शस्योत्सवों में से एक मकर

 ISSN 2581-4133

सक्रांति है। सूर्यदेव के प्रति कृतज्ञता दिखाने वाले मकर सक्रांति के त्योहार की एक भौगोलिक पृष्ठभूमि है। यह त्योहार सर्दियों के अंत और गर्म दिनों की शुरुआत का संकेत देता है। यह सूर्य के मकर राशि में प्रवेश का भी संकेत देता है और सूर्य (सूर्य देवता) को श्रद्धांजलि दी जाती है। यह 4 दिनों तक चलने वाला त्योहार है जो 13 जनवरी से शुरू होकर 16 जनवरी को समाप्त होता है। मकर संक्रांति से पहले के दिन को भोगी के नाम से जाना जाता है।

पौराणिक रूप से देखा जाए तो महाभारत के अनुसार, घायल भीष्म ने स्वर्गीय घर पाने के लिए मकर सक्रांति पर अपना शरीर छोड़ने और रहने का फैसला किया। तब से यह माना जाता है कि मकर सक्रांति के दिन मरने वाले को निर्वाण प्राप्त होता है। मकर सक्रांति के दिन, राजा भगीरथ पवित्र नदी गंगा को पृथ्वी पर लाए और राजा सगर के पुत्रों की आत्माओं को मुक्त कराया।

यह त्योहार पूरे देश में पोंगल (तमिलनाडु), माघी (बिहार), भोगी (कर्नाटक, तमिलनाडु, आंध्रप्रदेश), उत्तरायण (गुजरात) बिहू (असम), बैसाखी (पंजाब) जैसे विभिन्न नामों और रीति-रिवाजों के साथ मनाया जाता है।

कर्नाटक एवं महाराष्ट्र में तिल और गुड के मिश्रण से बने लड्डू जैसे खाद्य पदार्थ को बनाकर अपने बंधुओं, मित्रों आदि में बाँटा जाता है। यदि वैज्ञानिक दृष्टिकोण से देखा जाए तो हम पाएंगे कि इस समय ठंड के मौसम से लड़ने के लिए शरीर को जो मूलभूत आवश्यकता होती है वो इन दो पदार्थों से प्राप्त होता है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि हमारे पूर्वजों ने प्रकृति को पूर्णतः आत्मसात करते हुए, उसके साथ सामरस्य स्थापित किया। कर्नाटक में एक मटके में चावल, गुड, गन्ने को मिलाकर, उसे लकड़ी की आंच में पकाया जाता है और प्रसाद के रूप में ग्रहण किया जाता है। दूसरे दिन गाय-बैल की पूजा होती है। उनका स्नान करके, उन्हें सजाया जाता है और ग्रामीण प्रदेशों में उन्हें शोभायात्रा में भी ले जाया जाता है। अच्छी फसल के लिए मिट्टी और पानी जैसे तत्वों से प्रार्थना करते हैं।

इस त्योहार के दौरान पतंग उड़ाना भी एक महत्त्वपूर्ण परंपरा है। पंजाब, गुजरात, आंध्रप्रदेश, कर्नाटक आदि कई राज्यों में इसका चलन है। गुजरात में अंतरराष्ट्रीय पतंग त्योहार भी पर्यटन का एक मुख्य आधार बन गया है।

लोहड़ी - लोहड़ी एक फसल उत्सव है जो मुख्य रूप से पंजाब, हरियाणा और दिल्ली के उत्तरी राज्यों में मनाया जाता है। यह हर साल 13 जनवरी को मनाया जाता है और सर्दियों के मौसम के अंत का प्रतीक है। लोहड़ी के दौरान, पतंग उड़ाते हैं, अलाव जलाए जाते हैं, उसके चारों तरफ़ घूमते हुए लोकगीत गाते हैं और नृत्य करते हैं, गेहूँ की बालियों को उस आग में पकाकर खाते हैं और अन्य पारंपरिक पंजाबी व्यंजनों का आनंद लेते हैं।

बिहू - बिहू असम का एक फसल उत्सव है जिसके तीन भाग हैं - बोहाग बिहू, कटि बिहू और माघ बिहू। अप्रैल के मध्य में मनाया जाने वाला बोहाग बिहू या रोंगाली बिहू, असमिया नव वर्ष की शुरुआत का प्रतीक है। लोग पारंपरिक पोशाक पहनते हैं, बिहू नृत्य करते हैं और पीठा, लारस और तरह-तरह के व्यंजनों का आनंद लेते हैं।

ओणम - ओणम, केरल का एक फसल उत्सव है जो राजा महाबली के घर वापसी का प्रतीक है और मलयालम के चिंगम महीने (अगस्त-सितंबर) में मनाया जाता है। लोग अपने घरों को फूलों से सजाते हैं, सर्प-नौका दौड़ में भाग लेते हैं और विविध पकवानों से बनी पारंपरिक ओणम साध्या (भोजन की पद्धति) का आनंद लेते हैं।

बैसाखी - बैसाखी एक फसल उत्सव है, जो हर साल 13 या 14 अप्रैल को पंजाब, हरियाणा और दिल्ली के कुछ हिस्सों में मनाया जाता है। यह नए कृषि मौसम की शुरुआत का प्रतीक है। लोग गुरुद्वारों में जाते हैं, भांगड़ा और गिद्दा नृत्य करते हैं और सरसों का साग और मक्की की रोटी जैसे पारंपरिक व्यंजनों का आनंद लेते हैं।

नुआखी - नुआखी ओडिशा का एक फसल उत्सव है जो भाद्रपद (अगस्त-सितंबर) के चंद्र महीने की पंचमी तिथि को मनाया जाता है। यह नई फसल के मौसम की शुरुआत का प्रतीक है। लोग इस दिन भगवान को मौसम की पहली फसल चढ़ाते हैं और चावल, दालमा और मिठाइयों से बनी दावत का आनंद लेते हैं।

वैशाख - बिहार का फसल उत्सव वैशाख, हिंदू महीने वैशाख (अप्रैल-मई) के पहले दिन मनाया जाता है और यह नई

फसल के मौसम की शुरुआत का प्रतीक है। मौसम की पहली फसल भगवान को चढ़ाई जाती है और सत्तू, लिट्टी और चोखा का भोज खाया जाता है।

पोंगल - तमिलनाडु का फसल उत्सव पोंगल तमिल महीने थाई (जनवरी-फरवरी) में चार दिनों तक मनाया जाता है। इस दिन सूर्य देव की पूजा की जाती है। लोग अपने घरों को रंगोली से सजाते हैं, मीठा चावल और गुड से बना 'पोंगल' बनाते हैं, भगवान को चढ़ाते हैं और गाय-बैल की पूजा करते हैं।

हेमिस - हेमिस लद्दाख का एक फसल उत्सव है। तिब्बती बौद्ध धर्म के संस्थापक गुरु पद्मसंभव की जयंती के दिन मनाया जाने वाला यह उत्सव यह हर साल जून-जुलाई में हेमिस मठ में मनाया जाता है। रंग-बिरंगे परिधान पहनकर लोग चाम नामक एक पारंपरिक नृत्य करते हैं और पारंपरिक लद्दाखी व्यंजन बनाते हैं।

गुड़ी पड़वा - गुड़ी पड़वा महाराष्ट्र के नए साल का त्योहार है। आम जैसे फलों को तोड़ा जाता है जो रबी की फसल की कटाई और समापन का प्रतीक है। पारंपरिक गुड़ी या बांस की गुड़िया आम और नीम के पत्तों का उपयोग करके बनाई जाती है, जिसे फिर प्रवेश द्वार पर लटका दिया जाता है। कर्नाटक और आंध्र प्रदेश में 'उगादी' (नये वर्ष का प्रारंभ) के रूप में इस त्यौहार को मनाया जाता है।

ड्री - अरुणाचल प्रदेश का ड्री उत्सव अपतानी जनजाति के लिए वर्ष के एक महत्त्वपूर्ण समय फसल कटाई के मौसम की याद दिलाता है। हर साल 5 जुलाई को अरुणाचल प्रदेश के जीरो क्षेत्र में ड्री बलिदान और प्रार्थनाओं के साथ मनाया जाता है। ड्री त्योहार के दौरान, तामू, मेती, मेडर, मेपिन और दानी नामक पाँच मुख्य देवताओं को प्रसन्न किया जाता है 'तामू' कीड़ों और पीड़कों को दूर भगाने के लिए; 'मेती' महामारी और मनुष्यों की अन्य बीमारियों को दूर भगाने के लिए ; 'मेडर' प्रतिकूल तत्वों से कृषि क्षेत्रों को साफ करने के लिए किया जाने वाला शुद्धीकरण अनुष्ठान है; मेपिन - यह स्वस्थ फसलों और मानव जाति की भलाई के लिए आशीर्वाद मांगने के लिए किया जाता है। दानी-दानी को मिट्टी की उर्वरता, चावल के खेतों में जलीय जीवन की प्रचुरता, स्वस्थ मवेशियों और सभी मनुष्यों की समृद्धि के लिए भी किया जाता है।

भारतीय लोक त्योहारों की जड़ें प्रकृति की पूजा में हैं और वे विभिन्न मौसमों, ऐतिहासिक या पौराणिक घटनाओं आदि को याद करते हुए विभिन्न त्योहारों के माध्यम से प्रकृति से अपने संबंध को अभिव्यक्त करते हैं। प्रकृति उत्सवों की सभी क्षेत्रों में गहरी जड़ें हैं, और यह प्रकृति, इतिहास और पौराणिक कथाओं के साथ सद्भाव में रहने पर जोर देता है। ये जीवंत सामाजिक अंतःक्रियाओं, पारंपरिक सामुदायिक दावत, गायन और नृत्य द्वारा चिह्नित हर्षोल्लासपूर्ण अवसर हैं जिन्हें गंभीरता से मनाया जाता है। गहराई से परंपराओं में निहित होने के बावजूद, फसल उत्सव हमारे समकालीन मूल्यों और जरूरतों को भी दर्शाते हैं।

पोम्बलांग नोंग्रेम - मेघालय का फसल उत्सव का पोम्बलांग नोंग्रेम हर साल नवंबर में मनाया जाता है। इस दिन देवी ब्लेई सिंशर की पूजा की जाती है। लोग शाद नोंग्रेम जैसे पारंपरिक नृत्य करते हैं, रंग-बिरंगे कपड़े पहनते हैं और पारंपरिक खासी व्यंजनों का लुत्फ़ उठाते हैं।

वंगाला - मेघालय में ही हर साल नवंबर में वंगाला मनाया जाता है, जो देवी सालजोंग की पूजा के लिए समर्पित है। माना जाता है कि वे फसलों को आशीर्वाद देती हैं। वंगाला, एक पारंपरिक नृत्य है और लोग पारंपरिक गारो व्यंजनों का आनंद लेते हैं और ध्वजारोहण समारोह आयोजित करते हैं। यह त्यौहार असम में भी मनाया जाता है।

करम - झारखंड में हर साल सितंबर-अक्टूबर में करम मनाया जाता है, जो देवता कर्मा की पूजा के लिए समर्पित है, माना जाता है कि वे फसलों को आशीर्वाद देते हैं। लोग झूमर करते हैं, रंग-बिरंगे कपड़े पहनते हैं और पारंपरिक व्यंजनों का आनंद उठाते हैं।

नबन्ना - पश्चिम बंगाल का फसल उत्सव नबन्ना हिंदू महीने भाद्र (अगस्त-सितंबर) में विश्वकर्मा पूजा के दिन मनाया जाता है। देवता को मौसम की पहली फसल चढ़ाई जाती है और चावल, मछली की करी और मिठाइयों से बनी दावत का आनंद लिया जाता है।

बोनो-ना या बोनो नाह - यह मिनारो (ब्रोक्पा) लोगों का एक प्राचीन त्यौहार है जो भारत के लद्दाख के आर्यन घाटी क्षेत्र के धा और गरकोन गाँवों के बीच एक वर्ष के अंतराल पर बारी-बारी से आयोजित किया जाता है। यह लोगों और मिनारो की भूमि के लिए अच्छी फसलों और समृद्धि के लिए अपने देवी-देवताओं को धन्यवाद देने का त्योहार है।

उपसंहार - भारतीय लोक त्योहारों की जड़ें प्रकृति की पूजा में हैं और वे विभिन्न मौसमों, ऐतिहासिक या पौराणिक घटनाओं आदि को याद करते हुए विभिन्न त्योहारों के माध्यम से प्रकृति से अपने संबंध को अभिव्यक्त करते हैं। प्रकृति उत्सवों की सभी क्षेत्रों में गहरी जड़ें हैं, और यह प्रकृति, इतिहास और पौराणिक कथाओं के साथ सद्भाव में रहने पर जोर देता है। ये जीवंत सामाजिक अंत:क्रियाओं, पारंपरिक सामुदायिक भोज, गायन और नृत्य द्वारा चिह्नित हर्षोल्लासपूर्ण अवसर हैं जिन्हें गंभीरता से मनाया जाता है। गहराई से परंपराओं में निहित होने के बावजूद, फसल उत्सव हमारे समकालीन मूल्यों और जरूरतों के महत्त्व को भी दर्शाते हैं। ❑

भारतीय त्योहारों की विश्व व्यापकता

डॉ. गौरी त्रिपाठी

आचार्य एवं अध्यक्ष
हिंदी विभाग, गुरु घासीदास
केंद्रीय विश्वविद्यालय
बिलासपुर, छत्तीसगढ़

भारतीय संदर्भ में विश्व व्यापकता एक महत्त्वपूर्ण मुद्दा है हमारी भारतीयता की आंतरिक बनावट ही ऐसी है कि यह अपने आप ही विश्व व्यापकता को प्राप्त हो जाती है फिर चाहे वह हमारी संस्कृति हो, परंपरा हो, मूल्य हो या हमारे त्योहार हों।भारतीयता अपने तमाम मूल्य के साथ-साथ रीति-रिवाज और त्योहारों में भी विश्लेषित होती है। भारतीय समाज मुख्यत: उत्सव धर्मी समाज रहा है लेकिन जैसे-जैसे दुनिया बदली है वैसे-वैसे हम संस्कृति और परंपराओं में भी काफी परिवर्तित हुए हैं। अब तो यह सीधे-सीधे लगभग दिखाई देने लगा है। हम कह सकते हैं कि पिछले कुछ दशकों में भारतीय त्योहारों को विश्व व्यापकता के रूप में काफी प्रसिद्धि मिली है। हमारे भारतीय त्योहार जो केवल हमारी अपनी संस्कृति, परंपराओं से ओतप्रोत थे अब पूरी दुनिया में इसका असर देखा जा रहा है। वैसे भी विश्व व्यापकता का संदर्भ केवल आर्थिक और सामाजिक जुड़ाव से नहीं है बल्कि हमारी सभी संवेदनाएँ अगर विश्व स्तर पर संदर्भित होती हैं तो ही यह विश्व व्यापकता का वास्तविक अर्थ है।

भारतीय मूल के लोगों का एक बड़ा हिस्सा प्रवासियों का भी है। ये भारतीय जब दूसरे देशों में प्रवास के लिए जाते हैं तो अपने साथ यहाँ के रीति रिवाज, संस्कृति सब कुछ ले जाते हैं. इसलिए विदेश में रहने वाला एक भारतीय पूरी भारतीय संस्कृति का प्रतिनिधित्व करने वाला और वाहक भी होता है। हमारे भारतीय त्योहारों को ये प्रवासी भारतीय अत्यधिक उत्साह के साथ मनाते हैं फिर यह दिवाली हो, होली हो, दुर्गा पूजा हो या कोई भी त्योहार हो। मॉरीशस, सूरीनाम, कनाडा, ब्रिटेन, अमेरिका आज देश में यह सारे भारतीय त्योहार बड़े उत्साह के साथ मनाए जाते हैं।

भारतीय त्योहारों की विश्व व्यापकता का एक बहुत बड़ा कारण संचार माध्यमों का सशक्त होना है। लगभग पूरी दुनिया ही ग्लोबल हो चुकी है जिसमें हम सभी मीडिया और मीडिया के प्रभाव से प्रभावित हैं। खासतौर पर सोशल मीडिया ने वैश्विक संदर्भ में भारतीय त्योहारों को काफी प्रचारित और प्रसारित किया है। यूट्यूब के चैनल, फेसबुक, इंस्टाग्राम आदि प्लेटफार्म पर भारतीय अपने फोटो, वीडियो अपनी परंपराएँ शेयर करते हैं। जाहिर सी बात है इलेक्ट्रॉनिक मीडिया की पहुँच पूरी दुनिया में है, यह भी एक माध्यम है कि सारी दुनिया भारतीय त्योहारों को, उत्सवों को, संस्कृति को जान और समझ रही है। हम सब यह देखते हैं कि तमाम विदेशी व्यक्ति भी हिंदी गानों पर, हिंदी डायलॉग पर, हिंदी परंपराओं पर अपनी प्रस्तुति देते हैं। उन्हें लगता है कि जब आप किसी देश के लोकगीत, त्योहार, परंपरा से जुड़ते हैं तो अनचाहे ही आप पूरी भारतीयता से अपने को जोड़ लेते हैं। भारतीय समाज की किसी भी परंपरा से

जुड़ना अंततः भारतीय मूल्य की विश्व व्यापकता की तरफ बढ़ना ही है। हमारी संस्कृति ही कुछ ऐसी है कि इससे लोग अनायास ही जुड़ जाते हैं। प्रसाद जी ने बहुत पहले अपने नाटक में लिखा था –

अरुण यह मधुमेह देश हमारा
जहाँ पहुँच अनजान क्षितिज को
मिलता एक सहारा

हमारी संस्कृति सबको अपना लेती है। हमारे रीति-रिवाज सब को एक साथ लेकर के चलने वाले हैं। यह सहजता ही दरअसल सबको जोड़ देती है।

भारतीय त्योहार और पर्वों का एक अनोखा उदाहरण अभी शुरू होगा महाकुंभ के पर्व में। हम पाते हैं कि हम भारतीयों से ज्यादा इसमें विदेशी भी शिरकत करते हैं तो आश्चर्य में पड़ जाते हैं कि महाकुंभ में कैसे इतनी भीड़ एक साथ इकट्ठा होती है। वह कौनसी ऐसी भावना हैं जो सबको एक सूत्रता में बांधकर रखती हैं पूरी दुनिया आश्चर्य करती है।

भारतीय त्योहारों की विश्व व्यापकता का एक बहुत बड़ा कारण व्यापार भी है, बड़े स्तर पर त्योहारों के समय खास तौर पर भारतीय त्योहारों के समय दीप मालाएँ, रंगीन सजावट, मिठाइयाँ उपहार और कपड़ों की खरीदारी ने विश्व बाजार में भारतीय उत्सवों की व्यापकता को और बढ़ाया है। पूरी दुनिया जान जाती है कि इस समय भारतीय समाज में त्योहार मनाया जाने वाले हैं। बहुत सारे सामान विदेश से आयातित किए जाते हैं। यहाँ तक कि विश्व बाजार के ऊपर दबाव होता है कि वह हमारी भारतीय संस्कृति के अनुकूल तमाम चीजों को डिजाइन करें जिन्हें भारतीय समाज बहुत पसंद करें। वैसे भी भारत एक बड़े उपभोक्ता वर्ग के रूप में उभर चुका है।

पूरी दुनिया में भारतीय संस्कृति के प्रति एक लगाव और रुचि इन दिनों देखने को मिलती है, हमारे पर्वों और त्योहार पर शिरकत करने के लिए तमाम विदेशी जन भी दिखाई पड़ते हैं। कुछ ऐसी विश्व स्तर की फिल्में भी बनी हैं जहाँ उन्होंने स्वीकार किया कि शांति और अध्यात्म का यह देश ही उन्हें मानसिक शांति दे सकता है। हॉलीवुड से जुड़े हुए तमाम अभिनेता और अभिनेत्री भारतवर्ष में एक बार जरूर आते हैं। खासतौर पर धार्मिक नगरी का भ्रमण करते हैं और शांति की तलाश करते हैं। हम सब यह जानते हैं कि विश्व सभ्यता जब बहुत सभ्य हो जाती है तब वह असभ्यता की श्रेणी में आने लगती है। सब कुछ पाने के बाद अंततः व्यक्ति जो अकेलापन महसूस करता है उसे अध्यात्म ही सहारा देता है। यह कहने में कोई संकोच नहीं है कि भारत देश धर्म और आध्यात्मिकता का अद्भुत स्रोत है।

हमारी शास्त्रीय कलाएँ, भारतीय ज्ञान परंपरा, जिसमें संगीत, नृत्य योग आयुर्वेद सबसे प्राचीन स्वरूप में हमारे यहाँ ही मिलता है। यह जिस किसी को भी सीखना या समझना होगा उसे भारत को समझना होगा। अपने आप में यह भी एक बड़ा महत्त्वपूर्ण कारण है भारतीय त्योहारों के विश्व व्यापकता का।

भारत जैसे विविधता से भरपूर देश में, जहाँ हर राज्य, धर्म, भाषा और समुदाय की अपनी विशिष्ट पहचान है, वहाँ राष्ट्रीय एकता बनाए रखना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। इस चुनौती का सामना करने में उत्सवों का आयोजन महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। उत्सव न केवल आनंद और उल्लास का माध्यम होते हैं, बल्कि वे सामाजिक, सांस्कृतिक और मानसिक रूप से लोगों को एकजुट करने का एक सशक्त माध्यम भी होते हैं।

हमारे भारतीय त्योहार विश्व स्तर पर मनुष्यता के चेतना को आगे बढ़ाने का काम कर रहे हैं। यह भारतीयता तमाम विश्व के संस्कृतियों के बीच को जोड़ने का काम करती है जिससे बड़े से बड़े संकट को भी हम हरा सकते हैं। भारतीय त्योहारों की यह विश्व व्यापकता निश्चित तौर पर भारतीय संस्कृति को विश्व स्तर पर उच्च स्तर पर ले जाने का बहुत ही सशक्त माध्यम है।

भारत का हर राज्य अपनी अलग संस्कृति और परंपरा से जुड़ा हुआ है। कहीं पर व्रत का उत्सव मनाया जाता है कहीं धार्मिक और सांस्कृतिक आयोजन होते हैं। यही वह समय होता है जब हम एक दूसरे की संस्कृतियों को समझते हैं और सम्मान की दृष्टि से देखते हैं। जैसे हम होली त्योहार को लें। यही होली दक्षिण भारत में दूसरी तरह से मनाई जाती है जैसे कि ओणम या पोंगल। जब हम इन उत्सवों में शामिल होते हैं तो निश्चित तौर पर हम उनकी संस्कृति का सम्मान करते हैं इससे हम एक दूसरे से जुड़ते हैं। दरअसल हमारी सांस्कृतिक विविधताएँ हमें अलगाव नहीं देती है बल्कि हमें अंत में जोड़ती हैं। सामाजिक समरसता का भाव। इसी प्रकार तो यह आगे बढ़ती है जब हम मिलजुल कर काम करते हैं। अगर यह त्योहार पर्व ना हो तो शायद हम आपस में कभी मिल ही ना पाएँ। इस बहाने हम बाध्य होकर एक दूसरे से मिलते हैं और हमारी यह समरसता धीरे-धीरे और प्रगाढ़ होती है।

हमारा देश इस मामले में काफी आगे है। दिवाली एक ऐसा त्योहार है जिसे हिंदू मनाते हैं लेकिन मुस्लिम समुदाय के लोग भी इस दिन अपने हिंदू मित्रों को मिठाईयाँ देते हैं, उनके घर जाते हैं, शुभकामनाएँ देते हैं। इसी तरह ईद के दिन हिंदू समाज के लोग उनके साथ मिलकर खुशियाँ मनाते हैं एक दूसरे को सम्मान देते हैं इसे ही तो कहते हैं विविधता में एकता और यही भारतवर्ष की सबसे बड़ी पहचान है।

इन त्योहारों के अतिरिक्त राष्ट्रीय पर्व जैसे स्वतंत्रता दिवस, गणतंत्र दिवस, गांधी

जयंती या बाल दिवस ऐसे त्योहार भी प्रत्येक नागरिक को अपने देश के प्रति गौरवान्वित कर देते हैं। इन तिथियों में देश में ही नहीं बल्कि विदेशों में भी तमाम झांकियाँ, समारोह सांस्कृतिक कार्यक्रम एकजुट होकर मनाए जाते हैं। यह एकजुटता दरअसल हम सब एक साथ मिलकर मनाते हैं। यह कहीं ना कहीं हमारे संगठित होने को भी दर्शाता है। राष्ट्रीय एकता के प्रतीक होते हैं, ये सभी राष्ट्रीय पर्व। खासतौर पर स्कूल, विश्वविद्यालय, कॉलेज या सार्वजनिक स्थल पर हर वर्ग और हर समुदाय के लोग इकट्ठा होते हैं। राष्ट्रगीत गाते वक्त या राष्ट्रगान गाते वक्त हम सब एक साथ राष्ट्रीयता के गर्व से भर जाते हैं। ऐसे आयोजन हमें यह बताते हैं कि हमारे रंग रूप भले अलग हैं लेकिन अंततः हम एक ही हैं। यही संगठित होना ही हमारी सबसे बड़ी ताकत भी है।

इन सारी प्रक्रियाओं के मूल में हमारी संवेदनाएँ और सहानुभूति और ज्यादा परिपक्पव होते हैं। हम अपनी भावनाएँ एक दूसरे से साझा करते हैं। हम समझ जाते हैं कि जो हमारी तरह नहीं है वह भी उतना ही बेहतर है। हमें दूसरों से जुड़कर ही उनकी आस्थाओं, विश्वास, सहानुभूति इत्यादि के बारे में पता चलता है। यह पूरी प्रक्रिया समाज में एक मनुष्यता की भावना को जन्म देती है जिससे हम बड़ी से बड़ी लड़ाइयों को जीत जाते हैं क्योंकि जीत तो अंततः मनुष्यता की ही होती है।

हमने देखा है कि भारतीय उत्सव जब मनाए जाते हैं उसके काफी पहले से ही हम इसकी तैयारी करते हैं, इसकी रूपरेखा बनाते हैं। इस दौरान भी हम एक दूसरे के निकट आते हैं। रोजमर्रा की जिंदगी से ऊबे हुए लोगों के बीच में एक सकारात्मकता का संचार होता है। हम ज्यादा कल्पनाशील होते हैं, हमारे अंदर उत्साह भर जाता है। त्योहार, पर्व यह सब हमें मनोवैज्ञानिक रूप से समृद्ध भी करते हैं। कभी-कभी तो इन मेल मिलाप और उत्सव की वजह से पुराने झगड़े भी दूर हो जाते हैं। हम अपना हृदय उदार कर लेते हैं।

जब फागुन का आगमन होता है तो होली का त्योहार नए वर्ष के रूप में हमारे सामने आता है जिसमें प्रकृति चारों तरफ खुशियाँ मनाती नजर आती है। जंगल पलाश के फूलों से भर जाता है, प्रकृति में आनंद के साथ-साथ हमारे हृदय में भी आनंद और प्रेम उमड़ने लगता है। होली के त्योहार में हम अपने मनभेद को भुलाकर के आगे बढ़ जाते हैं। रंग खेलने के दौरान उत्साह का जो माहौल होता है उसमें हम अपनी खुशियाँ साझा करते हैं। कुछ देर के लिए अपने दुखों को, पूर्वाग्रहों को भूल जाते हैं।

इसी तरह प्रकाश का पर्व दिवाली हमारे लिए उजाला ले आता है। यह उजाला जिस तरह अंधेरा खत्म करता है वैसे ही हमारे मन के कोनों में छिपे हुए अंधेरे को भी खत्म करता है। दिया जलाते वक्त हम कहते हैं जलाओ दिए पर रहे ध्यान इतना अंधेरा धरा पर कहीं रह न जाए.. जब हर व्यक्ति खुश होगा तभी हमारी दिवाली बेहतर होगी। इसी कामना से हम सब भरे रहते हैं। उत्सवों की एक सबसे बड़ी विशेषता है कि यह अकेले नहीं मनाये जा सकते हैं। प्रसन्नता खुशियाँ आप अकेले महसूस ही नहीं कर सकते हैं इसीलिए हम सामूहिकता को सबसे पहले रखते हैं। जीवन का असली सौंदर्य तो सामूहिकता में ही है।

इन उत्सवों के साथ-साथ जन जागरूकता के तमाम कार्यक्रम आयोजित होते हैं, यह गतिविधियाँ भी हमें विश्व व्यापकता से जोड़ती हैं। हम अपने कर्तव्यों के एहसास से भर जाते हैं इसी दौरान हम अपने देश के इतिहास, परंपरा, संस्कृति और पुरानी धरोहरों से भी परिचित होते हैं। यह सांस्कृतिक धरोहर अन्य देशों के नागरिकों को भी काफी अचंभे में डाल देती हैं जिसकी वजह से वह कहीं ना कहीं भारत आकर के या भारत के बारे में जानने समझने की इच्छा रखते हैं। इस वजह से भी हमारी विश्व व्यापकता का दायरा बढ़ जाता है।

हमारे भारतीय त्योहार विश्व स्तर पर मनुष्यता को आगे बढ़ाने का काम कर रहे हैं। यह भारतीयता समूचे विश्व की संस्कृतियों के बीच को जोड़ने का काम करती है जिससे बड़े से बड़े संकट को भी हम हरा सकते हैं।भारतीय त्योहारों की यह विश्व व्यापकता निश्चित तौर पर भारतीय संस्कृति को विश्व स्तर पर, उच्च स्तर पर ले जाने का बहुत ही सशक्त माध्यम है। ❑

राजस्थान की गौरवपूर्ण उत्सव परंपरा

डॉ. ममता जोशी
उप प्राचार्य
गौरी शंकर बिहाणी महाविद्यालय, जयपुर
राजस्थान

राजस्थान की गौरवशाली परंपराएँ यहाँ के उत्सव, यहाँ की संस्कृति तथा उसके अभिरक्षार्थ अनुपम त्याग एवं पूर्ण बलिदान के लिए जगजाहिर हैं, यहाँ का चप्पा-चप्पा थर्मोपोली और बच्चा बच्चा लियोनिडास है, यहाँ के सांस्कृतिक पक्ष की भी अपनी एक अलग विशेषता है कि इसमें मिलने वाले श्रेय, प्रेय, सौंदर्य और कल्याण के तत्त्व इतने प्रबल होते हैं कि लंबे कालक्रम के उतार चढ़ाव की यात्रा के उपरान्त भी उनमें नैतिक गुणों तथा संस्कारों को नवीन प्रेरणा देने की क्षमता विद्यमान रहती है। राजस्थान विश्व प्रसिद्ध है। अपनी प्राचीन समृद्ध परंपरा, अद्‌भुत शौर्य एवं अनूठे कलात्मक अवदानों के कारण। विशेष रूप से मेवाड़ 'राजस्थान' संसार के परिदृश्य में देदीप्यमान हैं। इसकी संस्कृति नवोन्मेष शालिनी भारतीय संस्कृति का हृदय रही है, इसकी परंपराएँ स्मरणीय, अनुकरणीय एवं उल्लेखनीय हैं।

भारत विविधताओं का देश है परंतु भारतीय संस्कृति ने इसे एकत्व प्रदान किया है, मेवाड़ का राजकुल धर्म, संस्कृति का पोषक एवं रक्षक रहा है। इन परंपराओं के अनुसार आज भी विद्यमान है और बना रहेगा। राजस्थान की भूमि वीर वीरांगनाओं की भूमि है यहाँ माँ कहती है...

''इला न देणी आपणी हालरिया हुलराय।
पूत सिखावै पालणै - मरण बड़ाई पाय।।''

माँ कहती है - ''झूले में झूलते हुए अपने पुत्र से कि अपनी भूमि शत्रुओं को देने की बजाय उसमें मर जाना अधिक अच्छा।''

जहाँ माँ अपने पुत्र को वीरत्व का पाठ पढ़ाती है वहीं राजस्थान के लोक जीवन का सजीव चित्रण प्रस्तुत कर, मध्ययुगीन जीवन मूल्यों को उकेरते हुए पुरुष और नारी के पराक्रम की गाथाओं को कहने के साथ-साथ मरण को भी उत्सव के रूप में मनाती है। राजस्थानी काव्य में जन्म, विवाह और मृत्यु जैसे प्रमुख संस्कारों का जगह-जगह चित्रण है। भारत के गौरवशाली इतिहास को तोड़ मरोड़ कर प्रस्तुत किया गया है नारी को शृंगारिकता की आड़ में अस्तित्व विहीन कर दिया गया था और उसकी अस्मिता समाप्तप्राय हो गई थी उसे पुनः बहाल किया गया। वैचारिकता के इस महागर्त में डूबी हुई नारी के विलक्षण और विराट स्वरूप का अधिष्ठापन किया वीर माता के रूप में...।

''माई एहड़ा पूत जण,
जैड़ा राण प्रताप।
अकबर सूतो ओजकै,
जाण सिराणै साप।।''

''जननी जणे तो संत जाण कै दाता के सूर
नी तो रीजै बाझड़ी मत गवाजै नूर।।''

मातृशक्ति ने समय-समय पर अपनी शक्ति का एहसास कराया। नारी के आत्मसम्मान के साथ-साथ सामाजिक पारिवारिक और वैचारिक उत्थान किया व

 ISSN 2581-4133

अपने जीवन मूल्यों को मन मस्तिष्क और व्यवहार में आचरणीय बनाकर समाज को एक नई दिशा दी।

राजस्थान में वर्ष भर पर्व, उत्सव, त्योहार पंचांग के अनुसार मनाए जाते हैं इस परंपरा का प्रभाव आज भी विद्यमान है।

राजस्थान के प्रमुख उत्सव

नव वर्ष - चैत्र शुक्ल एकम को विक्रम संवत् अनुसार नवीन वर्ष आरंभ होता है। हम सभी वस्त्राभूषणों से सज्जित होकर नव वर्ष मनाते हैं। इसी शुभ दिन चैत्री (चैत्र) नवरात्रि का आरंभ होता है। सभी अपने-अपने घरों में नवदुर्गा की स्थापना करते हैं व आयोजित कार्यक्रमों में भाग लेते हैं।

सिंजारा - चैत्र शुक्ल द्वितीया को दातल हेला एवं सिंजारा उत्सव मनाया जाता है इसमें आम और बबूल का दातुन गौरी को कराया जाता है। स्त्रियाँ 'लाल बनीरा देश' में गीत गाती हुई ईश्वर की बारात में शामिल होती है। गौरी के सिंगार के लिए बेसन के आटे एवं रंग-बिरंगे दोनों से रत्न जड़ित स्वर्ण आभूषण के समान गहने बनाए जाते हैं। स्त्रियाँ गणगौर से संबंधित मांडणे बनाती हैं कलात्मक मेहंदी लगाई जाती है। अनेक प्रकार के मिष्ठान विशेष कर घेवर एवं चरके मीठे गूंणे बनाए जाते हैं। इस दिन वधुओं एवं बहन बेटियों को उपहार में मिष्टान भेजने की परंपरा है। रात्रि में गणगौर का टूंट्या निकाला जाता है जिसमें विवाह का दृश्य एवं बंदोली निकलती है।

''म्हारी दस्याएं दातण काँ को
म्हारा बाईसा ओ दाँतण आंबारों।।''

गणगौर - राजस्थान का सांस्कृतिक एवं वासंतिक पर्व गणगौर प्रसिद्ध है। माता पार्वती ने शिव को प्राप्त करने के लिए तपस्या की थी, यह उसका प्रतीक त्यौहार है। कुंवारी कन्या सुयोग्य सुंदर वर की तथा सुहागिने अक्षय सुहाग की कामना करती हैं। एक चौकी पर काष्ठ प्रतिमा गणगौर को स्थापित किया जाता है, उसे राजस्थानी वेशभूषा से सुसज्जित किया जाता है, लहंगा, कांचली, कुर्ती व अनेक रत्न जड़ित आभूषण, सिर पर रखड़ी प्रतिमा को दुल्हन की तरह सजाया जाता है। सौभाग्यवती स्त्रियाँ ही गणगौर को सुंदर सजाती हैं। पुरुष भी ईश्वर को दूल्हे के रूप में छबीला जवान बनाने का काम करते हैं। सर पर लपेटा, तुर्रा, कलगी, सरपे-कानो में मोती शरीर पर चमकीला वागा और काली दाढ़ी वाले ईश्वर को सजाते हैं। राजस्थान में मेवाड़ अंचल में उदयपुर की गणगौर की सवारी विश्व प्रसिद्ध है। इसकी शान शौकत एवं धूमधाम की चर्चा यूरोप तक फैली हुई थी वहाँ के स्थानीय जन इस दिन की पूरे वर्ष प्रतीक्षा करते हैं एवं सवारी के दिन अपार जनसमूह देखने के लिए माता की सवारी गणगौर घाट पर आते है। यह उत्सव राजकीय महत्त्व, सांस्कृतिक सौन्दर्य एवं धार्मिक पर्व का मिश्रित समन्वय है। गणगौर की सवारी का संचालन नगाड़ों के साथ होता है। पहले नगाड़ा तैयार होकर यथा स्थान पर पहुँचता है। दूसरा नगाड़ा बजाने पर सवारी को यथाक्रम कर दिया जाता था महाराणा द्वारा हाथी अथवा घोड़े पर बैठकर प्रस्थान का सूचक तीसरा नगाड़ा होता है। इस समय 21 तोपें दागी जाती हैं। इस प्रकार आज के दिन राजमहलों से रवाना होकर गणगौर, गणगौर घाट पर पहुँचती है। गणगौर की सवारी सुनहरी जरी की पताका जिस पर सफेद सूरज और चांद बना होता है, हाथी पर रखा जाने वाला चोखटा जिसमें चार व्यक्ति बैठते हैं। उसके पीछे बंद रहता है, अपनी रंगीली पोशाक एवं विविध वाद्य यंत्रों से सुसज्जित बैंड वाले राजस्थानी गीतों की कर्णप्रिय धुन अपने बैंड मास्टर के निर्देशानुसार बजाते हुए चलते हैं। फिर पलटन व जंगी रसीला रहता है। रसीले घुड़सवार एवं राइफल धारी पैदल सैनिक अपनी खाकी एवं लाल वर्दी में अपने अफसर के साथ रहते थे। इनके पीछे खासा हाथी पूरी तरह सजे हुए चलते हैं। इन पर सोने और चांदी के हौदे लगे होते हैं। इसके बाद उमराव सरदार एवं बड़े अधिकारी घोड़े पर अपनी पोशाक पहने हुए रहते हैं। इनके पीछे खासा घोड़े जिन्हें उनके रंग के अनुसार सोने एवं चांदी के गहने पहनाये जाते हैं। जरी एवं कीमती वस्त्रों से वे विशिष्ट होते हैं। रईस उनके साथ पैदल चलते हैं। उन घोड़े के दोनों तरफ मोर्छल रहते हैं व बहुत सारे घोड़े के पीछे महाराणा कुमार अपनी राजसी पोशाक में अपने अश्व पर बैठकर चलते हैं। युवराज के पीछे अर्दली व सिपाही एवं महाराणा का लवाजमा चलता है। इसमें रणकांकन का बाजा आकर्षण का केंद्र होता है। विशेष वेशभूषा में लंबे-लंबे भालेनुमा छड़ियों पर विशेष प्रकार की छम-छम ध्वनि वातावरण को प्रफुल्लित कर देती है, इनके साथ बांसुरी एवं तुरही वाले रहते हैं। बड़ी पोल से घाट बलिया लगाकर मार्ग अलग कर दिया जाता है। दोनों तरफ पहरा रहता है। कच्ची सड़कों पर पानी का छिड़काव कर दिया जाता है मिट्टी की सुगंध, सवारी में प्रयुक्त वाद्य यंत्रों की ध्वनि एवं जन कोलाहल के मिश्रण से उल्लासित मन पर इस सवारी की ऐसी छाप पड़ती है कि अगले वर्ष की प्रतीक्षा प्रारंभ हो जाती है। इस प्रकार सवारी का प्रथम चरण पूरा होता है।

गणगौर उत्सव का दूसरा चरण नाव की सवारी, पिछोला झील का निसर्गिक सौंदर्य, झील के किनारे वहाँ के राजमहल, मंदिर, हवेलियाँ, उदयपुर नगर को प्रसिद्ध व विश्व विख्यात बनाती हैं। इस दिन झील की शोभा देखते ही बनती है। इस सवारी के लिए दो विशालकाय नाव बनवाई जाती हैं जिन्हें आपस में जोड़ दिया जाता है। इस नाव में महाराणा के लिए ऊँचा सिंहासन रहता है इसमें महाराणा बैठते हैं।

दूसरी नाव में उमराव सरदार एवं उच्च अधिकारी बैठ सकते थे, या खड़े रहते थे। इसमें नृत्य करने वाली नर्तकियों को भी स्थान दिया जाता था। इस तरह महाराणा व पूरा परिवार इस आयोजन में भाग लेता था इस बीच महिलाओं के साथ गणगौर की सवारी गणगौर घाट पहुँच जाती थी। यह महिलाओं का जुलूस होता था जिसमें एक स्त्री गणगौर को अपने सिर पर उठाकर चलती थी अन्य स्त्रियाँ गीत गाती हुई साथ-

साथ चलती थी। गणगौर का विधिवत पूजन करने के बाद आशिका महाराणा को धारण करवाई जाती थी। नृत्य एवं गायन होता था, गणगौर का त्रिदिवसीय उत्सव प्रसिद्ध है। मेवाड़ के ठिकानों में भी इस उत्सव का लघु रूप हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता था।

जौहर उत्सव - चित्तौड़ (राजस्थान) में जौहर उत्सव नाम से वीर वीरांगनाओं के साहस और तेज का अतुल्य अकरणीय करिश्मा जो राजस्थान की वीरांगनाओं द्वारा मनाया जाता है।

''विख्यात है जगत में जौहर आज भी
मां पद्मिनी, करुणावती, सती मेड़तीजी
वीरांगनाएँ निजधर्म पर जलती रहीं। मेवाड़
में सतीत्व, शौर्य, साहस की शृंखला बनती
गई, सुख में सदा पीछे रही, दुख में भवानी
बन प्रताप पर छाई, माथो काट हाथ शूँ
मेल्यो प्रीतम थारो पेली गी हां।।'' -
'ममता जोशी'

शत्रु के प्रबल होने पर, भोजन सामग्री एवं रसद समाप्त हो जाने पर जब बात स्त्री की अस्मिता पर आती है तो मेवाड़ में जौहर उत्सव होता है। अंतिम निर्णायक खुला युद्ध जिसमें एक नारी स्वजागरण से सती होती है। स्त्रियों का सामूहिक अग्नि समर्पण जौहर के नाम से प्रसिद्ध हुआ। मुस्लिम आक्रांताओं ने देखा कि केसरिया कसूमल बाना पहनकर समस्त स्त्रियाँ निकल आईं रजपूतों ने शत्रु में त्राहि त्राहि मचा दी स्वाधीनता हेतु यह मृत्यु सुख शाखा नाम से प्रसिद्ध हुआ।

''केहर मूंछ भुजंग मण
सरणा ही शुभ टांह।
सती पयोधर कृपाण
धन पड़सी हाथी मुआँ।।''

कोई हलचल नहीं, नीरव निस्तब्धता चील कौओं की कांव-कांव या दूर किसी स्वान के रोदन के सिवा कोई आवाज नहीं शत्रु अपनी विजय पर उल्लसित तो हुआ परंतु बेचैनी बढ़ गई..... एक गहरा डरावना सन्नाटा.....।

जौहार शब्द मूलत: किस भाषा का है किसी शब्दकोश से सहायता नहीं मिलती। एक भाषा शास्त्री ने उसे हिब्रू का बताया जिसका अर्थ होता है - 'आग से जल मरना' परंतु हिब्रू शब्दकोश के अभाव में इसकी पुष्टि नहीं की जा सकती। राजस्थान में ही सर्वाधिक जौहर हुए हैं। फिलहाल इसे देशज शब्द मनाना चाहिए। स्वर्गीय डॉ. गोपीनाथ शर्मा ने सती शब्द की भी उत्पत्ति 'सत्यव्रत' शब्द से की है परंतु इस शब्द का अस्तित्व पौराणिक काल से है दक्ष प्रजापति के यज्ञ में उनकी पुत्री सती (शक्तिरूपा शिव की अर्धांगिनी) ने अपने पति के अपमान से क्रुद्ध होकर स्वयं को अग्नि कुंड में समर्पित कर दिया था।

वीर वीरांगनाओं की स्मृति में चित्तौड़गढ़ दुर्ग पर यह उत्सव बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है। राजस्थान की अपनी आन, बान और शान, मातृभूमि पर मर मिटने वाली वीरांगनाओं की परंपरा रही है। युद्ध परंपरा में जौहर और शाकों की अपनी एक निराली व विशिष्ट परंपरा रही है। मेवाड़ में तीन शाके हुए हैं।

प्रथम शाके (जौहर) - महाराणा रतन सिंह की पत्नी महारानी पद्मिनी पूंगलगढ़ भाटियों की राजकुमारी थी। वह चित्तौड़ की महारानी (भटियाणी जी) शुक्ल त्रयोदशी 25 अगस्त 1303 ईस्वी में महारानी पद्मिनी व 16000 वीरांगनाओं ने अपने अस्मिता बचाने के लिए स्वयं को पंचतत्त्व में विलीन कर दिया।

द्वितीय शाके (जौहर) - महाराणा विक्रम सिंह के समय स्वयं महाराणा सांगा की धर्म पत्नी करुणावतीजी (हाड़ी रानी) ने विक्रम संवत् 1592 में 13000 रानियों के साथ सती हुई व अपना सतीत्व बचाया।

तृतीय शाके (जौहर) - महाराणा उदय सिंह जी के समय जयमल पत्ता के नेतृत्व मे महारानी ठकुरानी मेंडतीजी ने (विक्रम संवत् 1624 में) व (1568 ईस्वी में) 7000 वीरांगनाओं के साथ अग्नि में प्रवेश किया। राजस्थान वीर वीरांगनाओं की भूमि है। यहाँ मृत्यु को भी उत्सव के रूप में मनाया जाता है।

जमरा बिज - चित्रा कृष्णा द्वितीया - मेवाड़ के अलग-अलग समुदायों की गैर नृत्य वाली टोलियाँ नृत्य करती थी इसे इनाम भी दिए जाते थे। रात्रि में स्त्रियाँ जिस स्थान पर होली जलाती हैं वहाँ एकत्रित होकर मूसल कूटती हैं। लोकगीत जिसमें थोड़ा अश्लीलता का पुट होता है, गाए जाते हैं, चुहल एवं विनोद प्रियता में अर्धरात्रि निकल जाती है।

मेंनार : जमरा बिज उत्सव - राजस्थान के अनेक जिलों में जमरा बिज उत्सव का आयोजन होता है परंतु मेवाड़ में एक ऐसा गाँव भी है जहाँ होली बारूद से

खेली जाती है और ऐसी होली वहाँ पिछले करीब 450 वर्षों से अनवरत खेली जा रही है। इस गाँव का नाम मेंनार है। मेंनार में यह उत्सव जमरा बिज के दिन आतिशबाजी बारूद के साथ बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है। इस उत्सव के दिन गाँव को सतरंगी रोशनी से सजाया जाता है। यह गाँव पूरा मेनारिया जाति का है। यह सब ब्राह्मण हैं, परंतु स्वभाव से क्षत्रिय और बहादुर हैं जो जमरा बिज उत्सव होता है उसमें युवा द्वारा तलवारों से गैर नृत्य किया जाता है वही पुरानी तोप, तलवार, बंदूकों की सफाई व मरम्मत कर उस दिन सभी ग्रामीण इस आयोजन में भाग लेते हैं। यह पूरे फाल्गुन मास चलता है। परंतु मेनार की गैर अन्य स्थानों से विशिष्ट है क्योंकि अन्य जगह लकड़ी के डंडों से नृत्य होता है जबकि मेनार में ग्रामीण पारंपरिक वेशभूषा से सुसज्जित होकर तलवारों से खेलते हैं। यहाँ ओंकारेश्वर चौक में वृताकार में नृत्य करते हैं। रात में मेनार में युद्ध सा वातावरण दिखाई देता है घर का प्रत्येक बालक, पुरुष अपने हाथ में तलवार लेकर निकलता है व नृत्य के बीच में पटाखों से आतिशबाजी की जाती है और उसके बाद मेनार का इतिहास सुनाया जाता है। उसके बाद नृत्य किया जाता है। ओंकारेश्वर चौक में लाल जाजम पर अमल कसुबा रसम अदा की जाती है। पूरी रात लगातार रंणबांकुरा ढोल बजता रहता है। 450 वर्ष बाद भी यह उत्सव बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है। बाहर कार्य करने वाले ग्रामीण भी इस उत्सव में शामिल होने के लिए ग्राम में इस दिन अवश्य आते हैं।

जलझूलनी एकादशी : भाद्रपद शुक्ला एकादशी – मेवाड़ की जन्माष्टमी के पक्ष कृष्ण के जलवा पूजन का ही प्रतिरूप है। इस दिन मूर्तियों को पालकी में बिठाकर गाजे –बाजे के साथ जलाशय के किनारे ले जाकर स्नान करा कर लाया जाता है। प्रत्येक मंदिर से यह सवारी निकलने की प्रथा है। राजमहलों से जानकी राय जी पीतांबर राय जी की सवारी में पूर्ण लवाजमे के साथ महाराणा भी अपने उमराव के साथ शामिल होते हैं। इस राम रेवाड़ी को देखने के लिए सड़कों पर लोग बेवान को देखने के लिए दर्शन के लिए आते हैं। यह एक दर्शनीय एवं आकर्षक समारोह होता है। मेवाड़ में इस दिन गढ़बोर का मेला भी लगता है राजस्थान मे अनेक उत्सव मनाये जाते हैं जैसे – अशोकाष्टमी, रामनवमी, नव गौरी पूजा, एकलिंग जी का पाटोत्सव, धींगा गणगौर, आखातीज अक्षय तृतीया, वट सावित्री व्रत, निर्जला एकादशी, गुरु पूर्णिमा, ऊब छठ, छोटी तीज, नाग पंचमी, फूलडोल, वीर पुली (रक्षाबंधन से पहले), रक्षाबंधन, बड़ी तीज, जन्माष्टमी, गोगा नवमी, वत्स द्वादशी (भाद्रपद कृष्ण द्वादशी), पवित्रा चतुर्दशी, कुशोदकी अमावस्या, गणेश चतुर्थी, ऋषि पंचमी, अनंत चतुर्दशी, महाशिवरात्रि उत्सव (फाल्गुन कृष्णा त्रयोदशी)।

पौराणिक मान्यता के अनुसार इस दिन ज्योतिर्लिंग का प्राकट्य हुआ था, दूसरी मान्यता है कि शिव पार्वती का विवाह भी इसी दिन हुआ था, आदिदेव महादेव के अनेक रूप हैं और चारों वर्णों में पूजित आराध्य हैं व्रत, उपवास, जागरण, कीर्तन करके महादेव की उपासना की जाती है। प्रमुख देवालयों में पंचामृत से शिवलिंग को स्नान कराया जाता है और धूमधाम से एकलिंग जी की आरती होती है। प्रथम पहर पूजा चलती है हजारों लोग दर्शन करते हैं। जरगा जी में वह एकलिंग नाथ में मेला लगता है वह इस दिन में उत्सव के रूप में भी मनाया जाता है। उदयपुर का एकलिंग जी मंदिर आठवीं सदी में स्थापित किया गया। यहाँ पर हर साल शिवरात्रि के मौके पर विशाल जन से लाभ बढ़ता है। इस दिन को विवाह उत्सव के रूप में मनाया जाता है। यह स्थान 734 में बप्पा रावल द्वारा निर्माण करवाया गया था।

वर्तमान काल में हमारी संतति हमारे युवा पीढ़ी इस विशिष्ट संस्कृति के अवशिष्ट पार्थीव स्वरूप के प्रति आकृष्ट तो है पर उसके उद्भव एवं विकास में जो कर्म प्रधान भाव पक्ष था उसे विस्मृति कर उदासीन होती जा रही है। हमारे पूर्वजों एतदर्थ कितनी भारी कीमत चुका कर उसे जीवित रखा था इसका आकलन करना उसकी बुद्धि से परे है। भौतिक एवं उपभोक्ता संस्कृतियों के संसर्ग का दुष्परिणाम हमारे आधिभौतिक पक्ष पर हावी होता जा रहा है, जिससे हमारे आधिदैविक एवं आध्यात्मिक पक्ष वह हमारा सांस्कृतिक पक्षी सभी क्षीण होते जा रहे हैं और शून्यता व्याप्त हो रही है।

गोवर्धन पूजा – (खेखरा) कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा – मेवाड़ अंचल में गोवर्धन पूजा खेखरा उत्सव बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है। इस खेखड़ा उत्सव को दीपावली से भी अधिक महत्त्वपूर्ण लोकप्रियता के साथ मनाते हैं, यह किसान की दिवापाली है प्राय: आखँरिया (गाँव के बाहर का मैदान) में गायें एकत्रित होती है वहाँ 'आलो खोलड़ो' के रस्सा बांधकर पशु समूह के बीच ग्वाला दौड़ता है, तब उसे समूह में से कई गाएँ भड़क कर पीछे दौड़ती है और ग्वाल उसे लेकर गाँव की तरफ भागता रहता है, जो गाएँ अंत तक पीछा करती है उसके स्वामी के घर पहुँचने पर ग्वाल को नेग मिलता है। इस गाय के रंग से कृषि उपज के शकुन साधे जाते हैं; जैसे – सफेद (कपास), पीली (मक्का), गेहूंअन (गेहूँ)। इस गाय को खेखरे आई गई कहा जाता है। इधर घरों में महिलाएँ अपने द्वार पर गोबर से दो स्वरूप बनाकर उनकी पूजा करती हैं। गोवर्धन के पास बनाई गई कुंड़ी में दही बिलोने का दस्तूर होता है। गाँव के बड़े उमंग, उल्लास के साथ बैलों को जलाशयों पर ले जाकर स्नान करवाते हैं। इसके बाद उनका शृंगार किया जाता है। सींगो पर रंग माली पन्ने, शरीर पर मांडणे और पैरों पर मेहंदी लगाई

जाती है। सांयकाल में गाँव के बैलों का मोहल्लेवार सामूहिक पूजन होता है। यह अत्यंत रोचक सांस्कृतिक पर्व है। पूजन के लिए गली में लंबी लीलण की जाती है उस पर शकुन के मांडणे मांडे जाते हैं। उस पर निर्धारित स्थान पर बैलों की जोड़ियां खड़ी कर दी जाती है। जो हाली अथवा घर धनी संभाले रहते हैं। ग्राम विधि विधान से उनकी पूजा होती है। बैलों को लापसी खिलाई जाती है। हालिया को नए साफे बंधवाये जाते हैं। उसके बाद बैलों को भड़का कर दौडा दिया जाता है। उस समय उनके गलों की घटियों और घुंघरू - माल की ध्वनियाँ बड़ी प्रभावित लगते हैं। गाँव की औरतें पारंपरिक पोशाकों में बैलों के गीत गाती हैं -

''म्हारा धोल्या ने सोहे घुंघरू माला
म्हारा काल्या ने सोहे फुलां की झूल।।''

खेखरे के दिन रात्रि में सभी गाँव में 'घास भेरू' की सवारी निकाली जाती है। यह एक प्रकार का क्षेत्रपाल है जो गाँव के बाहर रखा जाता है। रात्रि में बैलों की जोड़ियाँ द्वारा सांकल बांधकर उसे 'घास बाबा' को गाँव के चारों तरफ घुमाया जाता है।

श्राद्ध पक्ष - भाद्रपद शुक्ल पूर्णिमा से अश्विनी कृष्ण अमावस्या तक वैदिक धर्म की मान्यता है कि मरणोपरांत पितृयोनि प्राप्त होती है। वे अंतरिक्ष के 'अर्यमा' लोक के निवासी हैं। पितृ अतृप्त आत्माएँ हैं वे अपने वंशजों द्वारा स्मरण करने से श्रद्धा एवं तर्पण में दी गई 'स्वधा' से तृप्त होकर आशीर्वाद देती हैं। शास्त्रीय वचन है कि जो लोग भौतिक सुख की कामना रखते हैं उन्हें पितृ कर्म श्रद्धा पूर्वक करना चाहिए। श्रद्धा से किया गया कर्म, श्राद्ध एवं तृप्ति देने वाले कर्म तर्पण हैं। जिस तिथि को मृत्यु हुई है, उस तिथि को श्राद्ध करने का विधान है। राजस्थान में श्राद्ध पक्ष को भी बड़ी श्रद्धा व पवित्रता के साथ मनाया जाता है। हर घर में पितरों का हवन कर उनको ध्यान कर, उनके नाम से भोजन कराया जाता है। भोजन करने के बाद ब्राह्मण को दान पुण्य के साथ विदा किया जाता है। श्राद्ध तिथि के एक दिन पूर्व हाथ जोड़कर पितृ तिथि का आह्वान कर श्रद्धा के दिन व्रत एवं संयम से रहना चाहिए। श्रद्धा सामग्री को एकत्र करने में प्रमाद नहीं करना चाहिए, यव तिल, कच्चा दूध, सुगंधित पुष्प (अगस्त का पुष्प पितरों को विशेष प्रिय है) नैवेद्य हेतु भोजन स्नान करके पवित्रता से बना बनाना चाहिए। श्राद्ध में षट रस युक्त सामग्री बनानी चाहिए, खीर एवं अनूप (मालपुआ) अच्छे माने जाते हैं। उड़द की दाल एवं दही से बनी एक वस्तु अपेक्षित है। नींबू एवं अदरक के टुकड़े अवश्य होने चाहिए। वायस - उच्चारण करते हुए कौओं को खिलाना गौ ग्रास एवं स्वान ग्रास देना विधि सम्मत है, इसके बाद सभी परिवार सहित भोजन करते हैं।

नवरात्र - अश्विनी शुक्ला प्रतिपदा से नवमी नौरता - मेवाड़ में नवरात्र के मुकाबले आसोजी नवरात्रा का महत्त्व अधिक रहा है। पितृ काल की समाप्ति के बाद शक्ति उपासना का काल है। एवं क्षत्रिय समाज में विशेष लोकप्रिय है। प्रतिपदा को शुभ मुहूर्त में स्थापना की जाती है जिसमें जवारों के मध्य में कलश स्थापित किया जाता है। मेवाड़ में खड़ग जी की स्थापना होती है। इस अवधि में व्रत रखा जाता है परंतु क्षत्रियों में मद्य, माँस सेवन की परंपरा रही है, अष्टमी के दिन यज्ञ हवन संपन्न किया जाता है। चित्तौड़ के काली माँ मंदिर में पाठ दर्शन करने जाते हैं व नदिया या तालाब में विसर्जीत किए जाते हैं।

दशहरा विजयादशमी - धर्म की अधर्म पर विजय का प्रतीक है विजयदशमी।

दीपावली - भारतीय संस्कृति का यह अनुपम त्यौहार है। राम द्वारा लंका विजय के उपरांत अयोध्या लौटने पर प्रसन्नता व्यक्त करने हेतु दीपक जलाए जाते हैं। आतिशबाजी होती है। नवीन परिधान पहने जाते हैं। घरों, किलों मंदिरों पर सुंदर सजावट होती है मिठाइयों के बाजार सजाते हैं। राम जी के आगमन पर पूरी भारत-भूमि स्वागत करती है। अयोध्या जी को सजाया जाता है दीप जलाये जाते हैं। घाटों में सरयू किनारे दीपदान कार्यक्रम विशेष होते हैं संपूर्ण राजस्थान ही नहीं पूरा भारत दुल्हन की तरह सजाया जाता है।

मकर संक्रांति - दान पुण्य का विशेष महत्त्व है, पूरे देश में अलग-अलग नाम से इस पर्व को मनाया जाता है। सूर्य अपनी विशेष स्थिति में रहता है, इस दिन पुण्य का महत्व है। बसंत के आगमन का सूचक है। तिल के लड्डू एवं खींच इस दिन के मुख्य व्यंजन है।

भरतभूमि की इस पावन माटी में कई तरह के उत्सव व परंपराएँ आज भी जीवित है इतिहास में विवरण मिलता है कि भारत देवभूमि है। श्री अटल बिहारी वाजपेई जी ने कहा था - ''भारत कोई भूमि का टुकड़ा नहीं है, वह जीता जागता राष्ट्र पुरुष है।'' यहाँ मृत्यु को भी उत्सव के रूप में मनाया जाता है यहाँ वीर केसरिया बाना पहनकर रणभूमि में उतरते हैं तो वीरांगनाएँ गंगालाभ हेतु अग्नि प्रवेश करती हैं। राजस्थान उत्सवों का प्रदेश है जहाँ जन्म, मरण परण तीनों संस्कार बड़ी धूमधाम से अंगीकार किए जाते हैं। वर्तमान काल में हमारी संतति हमारी युवा पीढ़ी इस विशिष्ट संस्कृति के अवशिष्ट पार्थिव स्वरूप के प्रति आकृष्ट तो है पर उसके उद्भव एवं विकास में जो कर्म प्रधान भाव पक्ष था उसे विस्मृत कर उदासीन होती जा रही है। हमारे पूर्वजों ने एतदर्थ कितनी भारी कीमत चुका कर उसे जीवित रखा था इसका आकलन करना उसकी बुद्धि से परे है। भौतिक एवं उपभोक्ता संस्कृति के संसर्ग का दुष्परिणाम हमारे आधिभौतिक पक्ष व हावी होता जा रहा है, जिससे हमारे आधिदैविक एवं आध्यात्मिक पक्ष व हमारा सांस्कृतिक पक्ष भी क्षीण होते जा रहे हैं और शून्यता व्याप्त हो रही है। ❑

दीपावली का आर्थिक महत्त्व

प्रो. एन.एम. खंडेलवाल
अध्यक्ष,
वेदव्यास प्रबंध अध्ययन पीठ,
श्री गोविंद गुरु विश्वविद्यालय,
गोधरा, गुजरात

दीपावली का त्योहार भारत में एक महत्त्वपूर्ण आर्थिक घटना है जिसका बहुआयामी तथा विस्तृत प्रभाव देश की अर्थव्यवस्था पर पड़ता है। उपभोक्ता त्योहार के लिए विशेष वस्तुएँ क्रय करने पर व्यय करते हैं। सामान्य उपभोग की वस्तुओं की अपेक्षा विशेष गुणवत्ता वाली वस्तुओं पर धन व्यय किया जाता है। त्योहार के लिए आवश्यक विशेष सामग्री भी क्रय की जाती है। एक अनुमान के अनुसार 2024 दीपावली त्योहार के लिए विशिष्ट क्रम पर उपभोक्ता ने 4.25 लाख करोड़ रुपये का व्यय किया जो 2023 में 3.75 करोड़ रुपये था।

कोरोना लॉक डाउन के कारण दो वर्ष दीपावली लोग जब सार्वजनिक रूप से नहीं मना पाये उस समय सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था मंदी के विष चक्र में फंस गई थी। जब लॉक डाउन हटा तब बड़े उत्साह से दीपावली मनाई गई तब अर्थव्यवस्था में थोड़ी रौनक दिखाई दी थी। हम भगवान से प्रार्थना करें कि ऐसा आर्थिक संकट पुनः न देखना पड़े। परन्तु उस त्रासदी के कारण दीपावली न मना पाने से भारतीय अर्थव्यवस्था पर जो बुरा प्रभाव पड़ा उससे दीपावली त्योहार मनाने का आर्थिक महत्त्व सिद्ध हो गया।

दीपावली पर्व का प्रभाव छोटे से लेकर बड़े उद्यमों तक सभी पर पड़ता है। कृषि, निर्माण उद्योग, हस्तशिल्प, गृह उद्योग, बड़े उद्योग, व्यापार, सेवाओं आदि सभी पर प्रभाव दिखाई देता है। इससे विनियोग तथा रोजगार पर पूरे देश में प्रभाव पड़ता है। सरकारी राजस्व में भी वृद्धि होती है।

दीपावली पर उपभोक्ता कितना व्यय किस मद/समूह पर करता है यह जानना भी आवश्यक है जो निम्नलिखित है –

क्र.सं	मद/समूह	प्रतिशत
1.	खाद्य पदार्थ व किराने का सामान	13 प्रतिशत
2.	जेवर	9 प्रतिशत
3.	कपड़े तथा वस्त्र	12 प्रतिशत
4.	सूखा मेवा, मिठाईयाँ व नमकीन	4 प्रतिशत
5.	घर की सजावट	3 प्रतिशत
6.	शृंगार प्रसाधन	6 प्रतिशत
7.	इलेक्ट्रोनिक्स व मोबाइल	8 प्रतिशत
8.	पूजा सामग्री तथा पूजा की वस्तुएँ	3 प्रतिशत
9.	बर्तन तथा रसोई के उपकरण	3 प्रतिशत
10.	कन्फेक्शनरी व बेकरी की वस्तुएँ	2 प्रतिशत
11.	भेंट की वस्तुएँ	8 प्रतिशत
12.	फर्नीचर तथा फर्निशिंग	4 प्रतिशत
13.	वाहन, हार्डवेयर, विद्युत सामान, खिलौने तथा विविध वस्तुएँ और सेवाएँ	25 प्रतिशत
	कुल	**100 प्रतिशत**

उपर्युक्त आँकड़े यह संकेत देते हैं कि दीपावली पर जो उपभोक्ता व्यय होता है वह खाद्य पदार्थ, किराना, जेवरात, कपड़ा व वस्त्र उद्योग, हलवाई, फर्नीचर व फर्निशिंग, पेन्ट उद्योग, शृंगार प्रसाधन उद्योग, इलेक्ट्रोनिक्स वस्तु उद्योग, बर्तन उद्योग, रसोई के उपकरण उद्योग, कन्फेक्शनरी व बेकरी उद्योग, गिफ्ट आईटम उद्योग, वाहन उद्योग, हार्डवेयर उद्योग, बिजली का सामान, खिलौने, पटाखा उद्योग आदि को प्रभावित करता है। सेवाओं में रंगाई-पुताई, यातायात इस व्यय का प्रमुख लाभार्थी है।

यह व्यय देश व्यापी है परन्तु अधिकांश भाग शहरों तथा महानगरों का है। शहर व गाँव के बीच बड़ी खाई देखने को मिलती है। व्यय में आर्थिक विषमता का प्रभाव भी देखने को मिलता है। धनवान व गरीबों की दीपावली के बीच अन्तर (उनके व्यय के स्वरूप में) स्पष्ट दिखता है। आर्थिक विषमता का प्रभाव दूर करने के लिए नि:शुल्क अन्नकूट तथा गरीबों को मिठाई, कपड़े, पटाखे खिलौने आदि देने की भी अनुशंसा की जाती है।

भारतीय उपभोक्ता आयातित वस्तुओं का उपभोग दीपावली पर भी करता है। मिट्टी के बने तेल के दीपक जलाने के बजाय चीन के आयातित दीपक जलाते हैं, इससे बचा जा सकता है। मिट्टी के लक्ष्मी-गणेश की मूर्तियों के बजाय चीन से आयातित मूर्तियों को पूज लेते हैं। भारत में बने खिलौनों के बजाय चीन में बने आयातित खिलौने तथा गिफ्ट वस्तुएँ काम में लेते हैं। इस व्यय का लाभ विदेश के निर्यातकों को मिलता है। इसमें भी यदि हमारे शत्रु देश को लाभ जाता है तो वह एक चिंता का विषय है। हमारे देश के मिट्टी के दीपक, मूर्तियाँ व खिलौने बनाने वाले कुम्हारों को इसका लाभ दीजिये। उनकी बनाई हुई वस्तुएँ दीपावली पर खरीदने का ध्यान रखें।

ई-कॉमर्स में ऑन लाइन वितरण की फर्मों के आगमन के बाद दीपावली त्योहार की खरीददारी में इनकी भागीदारी बढ़ रही है। यह 2024 में सामान्य 53 प्रतिशत थी।

इसका दुष्प्रभाव छोटे व्यापारियों तथा रेहड़ी-पटरी वालों पर पड़ा है। कई विदेशी ऑन लाइन वितरण जेसे अमेजान तथा गूगल मोटी छूट देकर उपभोक्ता को आकर्षित कर रहे हैं। ये जेबरात व इलेक्ट्रीकल व इलेक्ट्रोनिक्स सामान से लेकर दीये, पूजा सामग्री, शृंगार सामग्री, पोशाक, फर्नीचर व फर्निर्शिंग आदि भी वितरित कर रहे हैं। युवा वर्ग में ऑन लाइन खरीदने की पसंद बढ़ती जा रही है। इनका लाभ विदेशों को जाता है। कई भारतीय ऑन लाइन विक्रेता कम्पनियों में विदशी विनियोजकों का धन लगा हुआ है। उनका लाभांश विदेश में जाता है।

इन बातों को ध्यान में रखकर हमें दीपावली की पूजा का सामान, मिठाई, गिफ्ट, खिलौने, पटाखे आदि छोटे व्यापारियों व रेहड़ी पटरी वालों से ही खरीदना चाहिए ताकि वे भी दीपावली अच्छी तरह मना सकें। विदेशी ब्रांड के मंहगे कपड़े खरीदने के बजाय भारत में बना कपड़ा खरीद कर दर्जी से सिलवाना चाहिए। दीपावली की खरीददारी का लाभ छोटे व्यापारियों, रेहड़ी पटरी वालों, देशी हलवाइयों, दर्जियों, रंग-धुलाई करने वालों, हस्त शिल्प कलाकारों को मिले यह देश के हित में होगा।

नई पीढ़ी त्योहार मनाने में उदासीन हो रहे हैं। या त्यौहार को विकृत रूप (जुआ खेलना) आदि के उदाहरण देते हैं। त्योहार का स्वदेशी परम्परागत स्वरूप बचा कर रखना वर्तमान पीढ़ी का दायित्व है। दीपावली पर्व से जुड़ी हुई पौराणिक कथाओं का पंचक भी प्रारम्भ करना चाहिए जिससे नई पीढ़ी को इतिहास का ज्ञान मिल सके। यह प्रसन्नता की बात है कि दीपावली हमारे देश की कूटनीति का भी अंग बन रही है। कई देशों की सरकारें दीपावली मनाने लगी हैं। इसमें अमेरिका की सरकार प्रमुख उदाहरण हैं।

दीपावली का उपभोक्ता क्रय 2023 से 2024 में 4.5 प्रतिशत बढ़ा है। यह वृद्धि सभी उपभोग समूहों में हुई है। दीपावली की उपभोक्ता खरीद को बता देने के लिए सरकार तथा निजी क्षेत्र अपने कर्मचारियों को बोनस देते हैं। बैंक व्यक्तिगत ऋण भी देते हैं। परन्तु फिर भी चीन की बसन्त त्योहार की खरीद 2024 में 168.86 विलियन अमेरीकी डॉलर तथा 2024 की अमरिकी क्रिसमस खरीद 1 ट्रिलियन डॉलर की तुलना में भारत की दीपावली खरीद बहुत कम है। अत: भारत में अभी इसमें वृद्धि की बहुत गुंजाइश है। 2047 तक भारत विकसित अर्थव्यवस्था वाला देश होगा तथा भारत की दीपावली त्योहार की खरीद चीन व अमेरिका की त्योहार खरीद के बराबर हो जायेगी। भारत में दीपावली 2024 की ई. कॉमर्स खुदरा बिक्री लगभग 55,000 करोड़ रुपये की हुई है जो गत वर्ष की तुलना में 26 प्रतिशत अधिक थी। कुल खुदरा बिक्री का अनुमान एक लाख करोड़ रुपये है। इस प्रकार ऑन लाइन दीपावली खुदरा बिक्री कुल दीपावली की खुदरा बिक्री का लगभग 55 प्रतिशत है।

दीपावली त्योहार की उपभोक्ता खरीदी का केन्द्रीयकरण महानगरों में रहा है। 2024 में अकेले दिल्ली का भाग 75,000 करोड़ रुपये रहा। अब टीयर-2 वाले नगरों से भी उपभोक्त योग बढ़ रहा है। 45 प्रतिशत ग्राहक टीयर- 2 तथा ऊपर के शहरों से थे।

भारत सोने का आयातक देश है। दीपावली पर सोने तथा सोने के आभूषणों व बर्तनों की माँग कम हुई है। इसके दो कारण हैं - (1) सोने के ऊँचे भाव (2) भौतिक सोने के बजाय ETF में बिनियोग

करने की युवा वर्ग में पसंद।

दीपावली के त्योहार का कृषि से सीधा सम्बन्ध है। रबी की फसल के उत्पाद मूंग, चावल, बाजरा, अन्नकूट में खाया जाता है। गन्ना, सिंघाड़ा, सीताफल पूजा में काम आते हैं। पूरे माह अन्नकूट के कार्यक्रम चलते हैं। इनमें कृषि उत्पाद की खपत खूब होती है।

दीपावली का त्योहार पाँच दिन का होता है। यह धनतेरस से प्रारम्भ होता है। धनतेरस जेवर, वस्त्र, मकान, वाहन, बर्तन आदि खरीदने का शुभ मुहुर्त होता है। दीपावली त्योहार की अधिकांश खरीद इसी दिन होती है। दीपावली त्योहार का दूसरा दिन रूपचतुर्दशी होता है। इस दिन श्रृंगार प्रसाधनों, उबटन का प्रयोग होता है। तीसरा दिन मुख्य लक्ष्मी गणेश की पूजा का दिन होता है। इस दिन पूजा सामग्री, मिठाई, गन्ना, सिंघाड़ा, ज्वार के खीले, मक्की के खीले, मिट्टी के दीपक, रूई, तेल, पटाखे, उपहार का सामान, पूजा के लिए श्री गणेश व लक्ष्मी जी की मूर्तियाँ, बही खाते, दवात-कलम, तराजू आदि की खरीद होती है। चौथे दिन गोवर्धन पूजा व अन्नकूट होता है। इस दिन हरी मिक्स सब्जी, मूंग, चंवला, बाजरा, चावल, बेसन की कढ़ी आदि का अन्नकूट भोग भगवान को चढ़ा कर प्रसाद तथा महाप्रसाद का वितरण होता है। इन कृषि उपज के खाद्य पदार्थों की भारी बिक्री होती है। घी, तेल, दूध, शक्कर आदि की खपत भी खूब होती है। इससे खाद्यान्न व हरी सब्जी के उत्पादकों व व्यापारियों को विशेष लाभ होता है।

राम द्वितीया या भाई दूज पाँचों दिवस मनाकर दीपावली पर्व की पूर्णाहुति होती है। भाई-बहिन के यमुना स्नान करने का विशेष महत्त्व है। भाई बहिन के यहाँ भोजन करके तिलक निकलवाता है तथा बहिन को भेंट देता है। इसका प्रभाव यातायात, खाद्य सामग्री, वस्त्र भेंट की वस्तुओं आदि के व्यापार पर पड़ता है। नये वाहन तथा नये भूमि-भवन की खरीद भी शुभ मुहूर्त में करने की परम्परा है।

दीपावली त्योहार की विशेष खरीद से सरकार को जी.एस.टी. से विशेष कर राजस्व प्राप्त होता है। इससे सरकारी विकास व्यय करने के लिए अतिरिक्त कोष उपलब्ध होता है। राजकीय तथा निजी क्षेत्र में रोजगार सृजन होता है।

परम्परागत रूप से दीपावली पर स्टॉक में माल तथा देनदार बहुत नीचे स्तर पर होने से लेखा बंद करने व नये हिसाबी वर्ष के नये लेखे प्रारंभ करने की भी परम्परा है। इसे दीपावली वर्ष कहते हैं। गुजरात का यह नया वर्ष है जिसे गुजराती पर्यटन स्थानों पर जा कर मनाते हैं। इससे यातायात सेवाओं की माँग बढ़ती है। बिहार में छठ पर्व मनाते हैं लाभ- पंचमी व छठ को। दीपावली व छठ मनाने के लिए बाहर नौकरी धंधा करने वाले घर पर ही जाते हैं। इससे यातायात की भारी माँग होती है। भारतीय रेल विशेष रेलें चलाती है। हवाई जहाज के टिकिट भी बहुत मँहगे हो जाते हैं। टैक्सी, रिक्शा, बस सेवा, लोकल ट्रेन व मेट्रो ट्रेन सेवाओं की भी मांग बढ़ती है।

कुल मिलाकर दीपावली त्योहार की उपभोक्ता मांग से उत्पादकों, वितरकों, कर्मचारियों, सरकार, निवेशकों आदि सभी को लाभ होता है। यह आर्थिक विकास को बढ़ाने में रसायन का काम करती है।

दो नवीन प्रवृत्तियों का भी यहाँ उल्लेख करना आवश्यक है - (1) पर्यावरण रक्षा के लिए हरित दीपावली मनाने पर जोर। प्रदूषण रहित इलेक्ट्रोनिक पटाखे व आतिशबाजी का प्रयोग करने पर बल। (2) अयोध्या में दीपावली पर 25 लाख मिट्टी के दीपक जला कर गिनीज बुक ऑफ वर्ल्ड रिकार्ड में प्रविष्टि दिलाई गई। काशी में देव दीवाली पर 8 लाख मिट्टी के दीपक जलाना। भविष्य में बड़ी संख्या में में ऐसे आयोजन हो सकते हैं। इससे मिट्टी के दीपक बनाने वाले कामगारों को रोजगार के बड़े अवसर प्राप्त होंगे। रूई, तेल, माचिस/मोमबत्ती की माँग का भी सृजन होगा। पर्यटक भी आकर्षित होंगे। (3) बाजार में मिलावटी दूध, मावा, घी आदि पकड़े जाते हैं।

नई पीढ़ी के लोग त्योहार मनाने में उदासीन हो रहे हैं। या त्योहार को विकृत रूप (जुआ खेलना) आदि के उदाहरण देते हैं। त्योहार का स्वदेशी परम्परागत स्वरूप बचा कर रखना वर्तमान पीढ़ी का दायित्व है। दीपावली पर्व से जुड़ी हुई पौराणिक कथाओं का मंचन भी प्रारम्भ करना चाहिए जिससे नई पीढ़ी को इतिहास का ज्ञान मिल सके।

यह प्रसन्नता की बात है कि दीपावली हमारे देश की कूटनीति का भी अंग बन रही है। कई देशां की सरकारें दीपावली मनाने लगी हैं। इसमें अमेरिका की सरकार प्रमुख उदाहरण है। ❑

ये पर्व समाज को शिक्षित और सशक्त बनाने का एक महत्त्वपूर्ण साधन हैं। ये न केवल व्यक्तियों को ज्ञान प्रदान करते हैं, बल्कि उन्हें समाज में योगदान देने के लिए प्रेरित भी करते हैं। भारत जैसे देश में, जहाँ विविधता और सांस्कृतिक धरोहर का अद्भुत संगम है, शिक्षा और पुस्तकों के प्रति प्रेम और सम्मान को बढ़ावा देना समय की आवश्यकता है। इन पर्वों को उत्साह और सक्रियता के साथ मनाना चाहिए, ताकि शिक्षा का प्रकाश हर घर और हर हृदय तक पहुँचे। यह केवल एक आयोजन नहीं, बल्कि समाज को जागरूक और समृद्ध बनाने का एक सार्थक प्रयास है।

भारतवर्ष में शिक्षा त्योहारों और पुस्तक पर्व का महत्त्व

डॉ. विजेता एस. सिंह
एस. एस. मणियार विधि महाविद्यालय, जलगाव, महाराष्ट्र

'विद्या ददाति विनयं विनयाद् याति पात्रताम्।' अर्थात् विद्या से विनय प्राप्त होता है, और विनय से पात्रता प्राप्त होती है। यह प्राचीन श्लोक शिक्षा के महत्त्व को उजागर करता है, जो न केवल व्यक्ति के व्यक्तित्व को निखारता है, बल्कि समाज और राष्ट्र की प्रगति में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। शिक्षा वह अमूल्य रत्न है, जो मानव जीवन के हर पहलू को प्रकाशित करती है। यह न केवल ज्ञान का संग्रह है, बल्कि जीवन को दिशा देने वाली शक्ति भी है। भारत, जो अपनी सांस्कृतिक विविधता और समृद्ध विरासत के लिए प्रसिद्ध है, जहाँ शिक्षा को पर्व और उत्सव के रूप में मनाने की परंपरा अपने आप में ही अनूठी है, यहाँ शिक्षा के त्योहार और पुस्तक पर्व ही है, जो हमारे ज्ञान और सांस्कृतिक धरोहर को सहेजने का प्रयास करते हैं। तक्षशिला और नालंदा जैसे प्राचीन विश्वविद्यालय इस परंपरा के स्तंभ रहे हैं, जहाँ शिक्षा को जीवन का दीप माना जाता था। भारतीय परंपरा शिक्षा को केवल ज्ञान का साधन नहीं, बल्कि समाज को नई दिशा देने वाली अलौकिक शक्ति मानती है। इन आयोजनों का उद्देश्य न केवल ज्ञान का अर्जन है, बल्कि समाज को प्रेरित करना और जीवन के प्रति जागरूकता उत्पन्न करना भी है।

शिक्षा के त्योहार का मूल उद्देश्य समाज में शिक्षा का प्रचार-प्रसार और लोगों को शिक्षा के महत्त्व के प्रति सचेत करना है। ये पर्व न केवल छात्रों और शिक्षकों के लिए, बल्कि हर आयु और वर्ग के लोगों के लिए प्रेरणा का स्रोत हैं। ये आयोजन यह संदेश देते हैं कि ''शिक्षा वह ज्योति है, जो मनुष्य के जीवन से अंधकार को मिटाकर उसे प्रकाशमय बनाती है।'' इन आयोजनों के अंतर्गत न केवल ज्ञानवर्धक गतिविधियाँ होती हैं, बल्कि समाज के युवाओं मे शिक्षा की ओर आकर्षित करने के लिए विभिन्न कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं। जैसे कथा लेखन प्रतियोगिताएँ, विज्ञान प्रदर्शनियाँ और सांस्कृतिक गतिविधियाँ, कथा-कथन प्रतियोगिता। भारत में 5 सितंबर को शिक्षक दिवस के रूप में मनाया जाता है, जो इन आयोजनों का अभिन्न अंग है। इस दिन शिक्षकों के योगदान को सम्मानित किया जाता है। इसके अतिरिक्त, 11 नवंबर को राष्ट्रीय शिक्षा दिवस के रूप में मनाया जाता है, जो भारत के पूर्व राष्ट्रपति अब्दुल कलामजी के शिक्षा के क्षेत्र में दूरदर्शिता और योगदान को याद करने का अवसर है। शिक्षा के त्योहार समाज में नई ऊर्जा का संचार करते हैं। इनका उद्देश्य केवल शिक्षा का प्रचार नहीं है, बल्कि समाज में जागरूकता और समानता को बढ़ावा देना भी है। इनमें शिक्षा की महत्ता को समझाने के लिए प्रेरणादायक कहानियाँ, फिल्म स्क्रीनिंग, और तकनीकी कार्यशालाएँ भी आयोजित की जाती हैं।

 ISSN 2581-4133

पुस्तक पर्व का आयोजन न केवल पुस्तकों के प्रति आदर और प्रेम व्यक्त करने का अवसर है, बल्कि यह लोगों में पढ़ने की आदत को बढ़ावा देने और ज्ञान की विविधता को समझने का भी माध्यम है। भारत में कई प्रमुख पुस्तक पर्व और साहित्य उत्सव आयोजित किये जाते हैं, जो न केवल भारत के समृद्ध साहित्यिक इतिहास को उजागर करते हैं, बल्कि नए लेखकों और विचारकों को प्रेरणा मंच प्रदान करते हैं।

जयपुर साहित्य उत्सव विश्व का सबसे बड़ा नि:शुल्क साहित्य उत्सव है, जो हर साल जनवरी में आयोजित होता है। जैसा कि कवि गुलजारजी ने कहा है, 'पढ़ना एक आदत नहीं, जीवन का संगीत है', उसी तरह यह उत्सव साहित्य के प्रति प्रेम और समर्पण को प्रोत्साहित करता है। यह पर्व न केवल पुस्तकों के प्रति प्रेम को प्रोत्साहित करता है, बल्कि शिक्षा और संस्कृति के आदान-प्रदान का भी माध्यम बनता है। इसी प्रकार, कोलकाता पुस्तक मेला एशिया का सबसे बड़ा और विश्व का दूसरा सबसे बड़ा पुस्तक मेला है, जो पश्चिम बंगाल में शिक्षा और साहित्य का उत्सव माना जाता है। हैदराबाद साहित्य उत्सव, भोपाल साहित्य महोत्सव, और मातृभूमि इंटरनेशनल फेस्टिवल ऑफ लेटर्स जैसे आयोजन न केवल साहित्यिक चेतना को प्रबल करते हैं, बल्कि युवाओं को प्रेरित करने और रचनात्मक अभिव्यक्ति को मंच देने का कार्य भी करते हैं। बुकारू बुक फेस्टिवल विशेष रूप से बच्चों और युवाओं के लिए आयोजित होता है, जो पढ़ाई को रोचक और आनंददायक बनाता। पुणे पुस्तक महोत्सव, जो हाल ही में चर्चा में रहा है, जो महाराष्ट्र जैसे राज्य में साहित्य और शिक्षा के प्रति रुचि जगाने के लिए नई पीढ़ी को जोड़ने का कार्य करता है। इस महोत्सव में पाठकों और लेखकों के बीच संवाद स्थापित करने के साथ-साथ, साहित्यिक विषयों पर चर्चा और विचार-मंथन के मंच प्रदान किए जाते हैं।

ये आयोजन समाज में सकारात्मक परिवर्तन लाने के प्रभावशाली माध्यम हैं। इनका आयोजन न केवल शिक्षा को प्रोत्साहित करने के लिए किया जाता है, बल्कि सामाजिक समरसता, सांस्कृतिक चेतना और पर्यावरण संरक्षण जैसे मुद्दों को भी उजागर करता है। ये पर्व ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में शिक्षा के प्रसार के लिए महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इसके साथ ही, ये आयोजन आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों तक शिक्षा की पहुँच को सुनिश्चित करने के लिए कदम उठाते हैं।

भारत में शिक्षा और पुस्तकों का सांस्कृतिक महत्त्व अत्यंत गहरा है। 'सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म', यह प्राचीन उपनिषदो की उक्तियाँ शिक्षा के अद्वितीय महत्त्व को उजागर करती हैं। हमारे प्राचीन ग्रंथ, वेद, पुराण और उपनिषद शिक्षा और ज्ञान के प्रमुख स्रोत रहे हैं। ये पर्व इस सांस्कृतिक धरोहर को संरक्षित और प्रोत्साहित करने का कार्य करते हैं। भारत का इतिहास एक ऐसी अद्वितीय ज्ञान परंपरा का द्योतक है, जिसने तक्षशिला और नालंदा जैसे प्राचीन विश्वविद्यालयों के माध्यम से न केवल भारत को एक महान शैक्षणिक केंद्र बनाया, बल्कि पूरे विश्व को शिक्षा का आधार प्रदान किया। इन संस्थानों में विभिन्न विषयों का अध्ययन किया जाता था, जिसमें चिकित्सा, गणित, खगोल विज्ञान और धर्मशास्त्र शामिल थे। इस ज्ञान परंपरा की विशेषता थी शिक्षा में नवाचार, बहुआयामी पाठ्यक्रम और छात्रों तथा शिक्षकों के बीच मुक्त विचारों का आदान-प्रदान।

पुस्तक पर्व और शिक्षा के त्योहार भारत की इसी समृद्ध ज्ञान परंपरा को पुनर्जीवित करने और इसे आधुनिक संदर्भ में लागू करने के प्रयास हैं। इन आयोजनों के माध्यम से हमारी युवा पीढ़ी को अपनी सांस्कृतिक जड़ों से जोड़ने का प्रयास किया जाता है। शिक्षा और साहित्य के ये पर्व केवल आयोजन नहीं हैं, बल्कि समाज को नई दिशा देने वाले उपकरण हैं। जैसा कि भारतीय साहित्य में कहा गया है, 'विद्याविहीन: पशु: समान।' यह वाक्य शिक्षा की शक्ति को उजागर करता है। इनके माध्यम से हम एक बेहतर समाज और उज्ज्वल भविष्य का निर्माण कर सकते हैं। डिजिटल युग में इन आयोजनों को ऑनलाइन प्लेटफॉर्म पर विस्तारित करना समय की आवश्यकता है। डिजिटल पुस्तक मेले, वेबिनार, और ऑनलाइन पाठशालाएँ इस दिशा में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने लगी हैं।

इन आयोजनों के द्वारा शिक्षा में नवाचार को बढ़ावा देने की पहल की जाती है। जैसे कि आधुनिक शिक्षण तकनीकों का समावेश, प्रायोगिक परियोजनाओं का प्रोत्साहन, और सांस्कृतिक गतिविधियों के माध्यम से समग्र शिक्षा का दृष्टिकोण प्रस्तुत किया जाता है। यह विद्यार्थियों और शिक्षकों दोनों के लिए एक प्रेरणादायक मंच तैयार करता है। साथ ही, इन आयोजनों में साहित्य और शिक्षा के क्षेत्र में योगदान देने वाले व्यक्तियों को सम्मानित करने की भी परंपरा भारत मे शुरू की गई है, ताकि उनकी प्रेरणा से समाज और अधिक प्रगति कर सके।

निष्कर्ष

ये पर्व समाज को शिक्षित और सशक्त बनाने का एक महत्त्वपूर्ण साधन हैं। ये न केवल व्यक्तियों को ज्ञान प्रदान करते हैं, बल्कि उन्हें समाज में योगदान देने के लिए प्रेरित भी करते हैं। भारत जैसे देश में, जहाँ विविधता और सांस्कृतिक धरोहर का अद्‌भुत संगम है, शिक्षा और पुस्तकों के प्रति प्रेम और सम्मान को बढ़ावा देना समय की आवश्यकता है। इन पर्वों को उत्साह और सक्रियता के साथ मनाना चाहिए, ताकि शिक्षा का प्रकाश हर घर और हर हृदय तक पहुँचे। यह केवल एक आयोजन नहीं, बल्कि समाज को जागरूक और समृद्ध बनाने का एक सार्थक प्रयास है। ❑

भारत के सतत विकास की कुंजी हैं त्योहार और उत्सव

डॉ. राजकुमार चतुर्वेदी
प्रधानाचार्य,
एम.एल.वी. कॉलेज,
भीलवाड़ा, राजस्थान

यहाँ की धरती को भारतीय 'माँ' मानते हैं। यहाँ गाय को भी 'माँ' माना जाता है। यहाँ प्रकृति को (पीपल, तुलसी) को 'माँ' माना जाता है। जन्म देने वाली 'माँ' को 'माँ' मानते हुए यह सब है । गाँव की प्रकृति के विकास हेतु गाँव को भी 'माँ' मानते हैं। गाँवों में इसके कई कारण हैं। फसलें आती हैं। अन्न आता है। उसी के साथ में त्योहारों की रचना इस संस्कृति द्वारा की गई है। त्योहार केवल मात्र उमंग और उत्साह का कार्य नहीं करते। अपितु विकास का आधार बनाते हैं। यह भारतीय विकास की कुंजी है। दत्तोपंत ठेंगड़ी जी ने कहा है, भारत के त्योहार एवं उत्सवों से जीवन में उमंग और उत्साह का बीजारोपण होता है। भारतीयता से उन्नति, रोजगार, प्रसन्नता सतत रूप से प्रारंभ होती है। नव वर्ष के साथ में हम प्रकृति के शृंगार को देखते हैं। फूलों से पर्यावरण सुगंधित होता है। गाँव के खेतों में फसलें लहलहाती हैं। कभी ओणम का त्योहार होता है। तो कभी बैसाखी का त्योहार होता है। और कभी होली का त्योहार होता है। फूलों से प्रकृति आनंदित होती है। वहीं अनाज और धान्य से गाँव का गरीब समृद्ध होता है। वह अपने कार्य को नव सर्जना में बदलता है। इसी ऋतु चक्र के साथ समाज में उत्सव प्रारंभ होते हैं। भारतीयता विवाह उत्सव मनाती है। गाँव में संस्कृति कन्यादान करती है। गाँव या शहर में विवाह की गूंज शहनाई की गूंज। कुम्हार के बर्तनों की बिक्री। सुथार के घर-घर में चहल-पहल सुधरी कार्य। पत्तल दोने की माँग बढ़ जाती है। घर के बाहर ढोल की थाप बढ़ती है। विवाह उत्सव से समाज के निरंतरता में कार्य किए जाते हैं। हम इस बात को समझते हैं कि यह व्यवस्था भारतीयता और भारत के उत्सवों को सनातन काल से चला रही है। विवाह उत्सव भारत में संबंधों का सर्वोत्तम उदाहरण है। यही इस देश की त्योहार और उत्सव की प्रमुख आधार कुंजी है। उत्साह और समाज में विभिन्न प्रकार के कार्य अगर कहीं से प्रारंभ होते हैं वह परिवार है। शहर व गाँव में विवाह के साथ-साथ स्थानीय और स्व का पोषण भी होता है। गाँवों में गीत स्थानीय भाषा में स्थानीय शृंगार पर आधारित होते हैं। स्थानीय मेहमानों पर आधारित होते हैं। प्रकृति को पूजने पर आधारित होते हैं। खान-पान को लेकर, स्वास्थ्य को लेकर, वेशभूषा को लेकर सभी स्व आधारित होता है। आज हम भले पाश्चात्य डीजे की नकल कर रहे हैं परंतु जब बैंड 'जयपुर री चुनरी' पर धुन बजाते हैं, तब स्थानीय स्वाभिमान के स्वर हमें सुनाई देने लगते हैं। त्योहारों में स्थानीयता तो कमाल की है। लाखों करोड़ों लोग त्यौहार मनाते हैं। कृष्ण जन्मोत्सव हो, चाहे गणेश उत्सव हो,

 ISSN 2581-4133

शिवरात्रि, रामनवमी, महावीर स्वामी के नारे। हम अपनी उत्सव परंपरा को सतत विकास की गंगा भी कहें तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। हमें मालूम है 12 महीनों ऋतुओं के अनुसार हम लोग उत्सव मनाते हैं। एक बार श्रीमान प्रेम जी संस्कार भारती के संयोजक का फोन आया था। उन्होंने कहा कि हम लोग कृष्ण महोत्सव मना रहे हैं। जब कृष्ण उत्सव में मैं गया तो मुझे लगा कि 1000 से अधिक वहाँ पर कृष्ण बनकर, राधिका बनाकर और गोपियाँ बनकर बच्चे और बच्चियाँ आए हुए थे। उनके माता-पिता भी उनके साथ में आए हुए थे। हजारों लोगों का एक मनोरम दृश्य देखने को मिला। उत्साह और उमंग के साथ में कृष्ण जन्मोत्सव मना रहे थे। आज इस प्रकार से समाज में कृष्ण जन्मोत्सव समाहित हो गया है कि वहाँ हजारों पोशाकें भगवान श्री कृष्ण की बन रही हैं। हजारों बांसुरिया बनाई जा रही है। हजारों मुकुट बनाए जा रहे हैं। अनेक फूल वाले माला बना रहे हैं। बच्चों के कुछ गुब्बारे वाले भी अपने कार्य कर रहे हैं। खिलौने वाले खड़े हैं। भगवान श्री कृष्ण के जन्म उत्सव से हजारों लोगों को काम मिल रहा है। यही तो है सतत विकास का आधार। यही है उत्सव। भारतीयता क्या रचना करती है। गाँव हो या शहर में, गरीब हो चाहे पैसे वाला हो, भारतीय अर्थव्यवस्था में त्योहारों से चौमुखी विकास होता है। पिछले दिनों एक सर्वेक्षण आया है कि भारत में दीपावली के त्योहार पर एक महीने पहले और एक महीने बाद तक लाखों लोगों को रोजगार मिलता है। करोड़ों रुपए की अर्थव्यवस्था बढ़ती है। पिछले दिनों केवल महाराष्ट्र में गणेश उत्सव के अवसर पर 10000 करोड़ का कारोबार एक महीने में ही महाराष्ट्र में हुआ है। भारत में महिलाएँ दीपावली पर आभूषण के रूप में सोना खरीदती हैं। वह निरंतर विकास के लिए आधार बनता है। एक अध्ययन में आया है कि भारत की महिलाएँ पारिवारिक बचत का 78 प्रतिशत अपना योगदान देती है। जो त्योहार हैं वे सतत विकास की कुंजी हैं। पंडित दीनदयाल उपाध्याय ने अपने विचारों में कहा कि त्योहार और उत्सव भारतीय अर्थव्यवस्था का प्रमुख आधार हैं। एक प्रसंग में उन्होंने कहा कि दीपोत्सव और होली का उत्सव भारत की जीवन पद्धति के आधार हैं। इसके द्वारा भारत की नव रचना होती है। हर घर में नवनिर्माण होता है। हर युवक में नव उमंग पैदा होती है। पंडित दीनदयाल उपाध्याय भारत के वो रचनाकार थे जिन्होंने भारत के विकास को एकात्म मानव दर्शन के रूप में पहचाना और उसमें उन्होंने त्योहार और उत्सव को बहुत महत्त्व दिया। उन्होंने कहा कि त्योहार और उत्सव समाज के अंदर सदियों से निरंतरता के साथ चल रहे हैं। यह सतत विकास का आधार हैं।

एक बार दीपावली के दिनों में मैं आगरा की ईदगाह बस स्टैंड बैठा था। रात्रि के लगभग 10 बज रहे थे। मेरी धौलपुर की गाड़ी 10:30 बजे थी। सामने ही एक पॉलिश करने वाला व्यक्ति भी 10:00 बजे जूते की पॉलिश कर रहा था। उसी के पास में एक चाय वाला था। मैंने उससे पूछा कि तुम रात की 10:00 तक यहाँ क्यों बैठे हो। उसने मुझे कहा जी दीपावली का त्योहार आ रहा है। मैं अधिक कमा लूंगा तो मेरे बच्चों के लिए नई ड्रेस, यही तो मौका है कमाने का। उसने मुझे जो कहा मेरे मन में बहुत ही उत्साह पैदा करने वाला था। सामान्य व्यक्ति को भी त्योहार उमंगता से भर रहे हैं। उसके रोज-गार में उत्साह से अधिक योगदान दे रहे। पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी की भाषा में हमारे त्योहार अंतिम व्यक्ति के विकास का आधार होते हैं। अंत्योदय का विकास इन त्योहारों द्वारा किया जाता है।

देखा गया है कि विभिन्न प्रकार से अनेक उत्सवों में कई प्रकार की प्रतियोगिताएँ होती हैं। राजस्थान में जोधपुर, जैसलमेर, नागौर, पुष्कर मेले में विभिन्न प्रकार से साफा बाँधने की प्रतियोगिता होती है। धोती बाँधने की प्रतियोगिता होती है। स्थानीय कलाओं का वहाँ प्रदर्शन किया जाता है। वहाँ घोड़े आते हैं, वहाँ ऊँट आते हैं पुष्कर मेले में इनको सजाकर कर लाया जाता है। करोड़ों रुपए के मूल्य के घोड़े और ऊँट होते हैं। पुष्कर का मेला लाखों लोगों को आकर्षित करता है। हजारों विदेशियों को आकर्षित करता है। यह हमारी संस्कृति का प्रमुख आधार बना हुआ है। कह सकते हैं कि हमारे त्योहार, उत्सव समाज की खुली किताब है। इसको आँखों से देखकर पाटकर समाज खड़ा हुआ है। रक्षा बंधन त्योहार पवित्रता का धोतक है। समाज में रक्षाबंधन का त्योहार क्या केवल पैसों के आधार पर संभव है। यह तो समाज की रक्षा का कवच है। चरित्रता का कवच है। जीवन मूल्यों का कवच है। और इस कवच के कारण आज लाखों वर्षों से हमारा समाज चरित्रवान है। रक्षाबंधन, विवाह उत्सव भारत के गौरव हैं। जिसके कारण से भारतीय संस्कृति निरंतर काल से चली आ रही है।

सामान्यतया जिस देश की जीडीपी जितनी ज्यादा होगी उतना ही वह देश समृद्ध माना जाता है। हमारे प्रधानमंत्री भी कह रहे

हैं कि 2030 तक हम भारत को पाँच ट्रिलियन की अर्थव्यवस्था बना देंगे। बाहरी निवेश के माध्यम से आंतरिक आधारभूत संरचनाओं के विकास के माध्यम से। लघु उद्योगों के विकास के माध्यम से। प्रधानमंत्री जी कह रहे हैं हम सभी को वोकल फॉर लोकल होना चाहिए। अर्थात् हम सभी को स्थानीय वस्तुएँ अधिकतम खरीदना चाहिए। जिससे भाषा-भूसा, भेसज तथा अनेक विकास के आधार बनते हैं। हम अपने स्थानीय स्तर पर अधिक स्थानीय वस्तुओं को खरीदें। मेले में खरीदे, स्थानीय वेंडर से खरीदें, स्थानीय रिटेलर से खरीदें। परंतु स्थानीयता का भाव उसमें रहेगा तो अधिक से अधिक हम हमारी अर्थव्यवस्था को मजबूत कर सकेंगे।

भारत में गाँव से लेकर शहरों तक, गरीब से लेकर अमीर तक, युवा से लेकर बूढ़े तक, सभी देवी माँ की उपासना करते हैं। जब हमारे देश की संस्कृति ने माँ को शक्ति स्वरूपा माना है। यह केवल संयोग नहीं है। संपूर्ण देश में माँ की आराधना के दो नवरात्र आते हैं। उन्हीं दो नवरात्रों में संपूर्ण भारत में जगह-जगह पर धूमधाम से, उत्साह से नवरात्र संपन्न होता है। छोटे-छोटे स्थान माँ के दरबार के लिए जाने जाते हैं। वहाँ छोटे-छोटे दुकानदार हैं उनको रोजगार मिलता है। उनको रोजी-रोटी मिलती है। हम लोगों ने अपनी सीमाओं को सुरक्षित रखने के लिए भी माता के मंदिर सीमाओं पर बनाये हैं। माँ वैष्णो देवी का मंदिर श्रीनगर में, जोधपुर के पास में तनोट माता का मंदिर एक तरह से सैनिक चौकियाँ हैं। जहाँ से देश के अंदर और देश के लोगों में एक स्वाभिमान का भाव जाग्रत करते हैं। हमारे पूर्वज आदि शंकराचार्य ने चार धाम दर्शन की व्यवस्था की है। द्वारकापुरी, जगन्नाथपुरी, रामेश्वरम, बद्रीनाथ की, करोड़ों लोग हर वर्ष यात्रा करते हैं। यह यात्रा निरंतर होने के कारण अर्थव्यवस्था का आधार बन जाती हैं। साथ-साथ में इन क्षेत्रों का सतत रूप से विकास होता है। बाड़मेर में नाकोड़ा भैरव एक स्थान है वहाँ दूर-दूर तक किसी भी प्रकार का पानी उपलब्ध नहीं होता परंतु उसके आसपास और छोटे-छोटे पशुओं के केंद्र बने हुए हैं। हजारों गाएँ हैं। उन गायों के आधार पर ही गाँव की अर्थव्यवस्था समृद्ध हुई है। नाकोड़ा भैरव जी के साथ-साथ लोग गाँव के दर्शन करने जाते हैं। पास में ही जालौर में पथमेड़ा है जहाँ हजारों की संख्या में गाएँ हैं। जिसके कारण उस क्षेत्र का विकास हो रहा है। हमारी विकास की कल्पना में केवल मात्र मानव ही प्रमुख नहीं है अपितु हमारे साथ जुड़े हुए प्रकृति के वह सभी अंग महत्त्वपूर्ण है जिनको हमने परिवार माना है। हमारे त्योहारों में पर्यावरण को बहुत महत्त्व मिला है। हम सब जानते हैं कि हमारे देवी मंदिर अधिकांश पर्वतीय क्षेत्र में, यह पर्यावरण के कारण ही हैं। हमारे समाज में प्रकृति माँ की पूजा के साथ पर्यावरण की भी रक्षा की भावना बलवती है।

हमारी युवा शक्ति देश के विकास में संपूर्ण रूप से लगी हुई है। भारत से बाहर 3 करोड़ से अधिक लोग निवास कर रहे हैं। इनमें हजारों युवक अमेरिका जैसे प्रतिष्ठित देश में, नासा एजेंसी में, माइक्रोसॉफ्ट कंपनी के अंदर लगभग 30 प्रतिशत भारत के युवा काम कर रहे हैं। युवा न केवल भारत की गौरवशाली परंपरा को वहाँ जीवित किए हुए हैं अपितु भारतीय संस्कृति को भी वहाँ पल्लवित करते हैं। लोकमान्य तिलक द्वारा महाराष्ट्र में एक त्योहार और उत्सव खड़ा किया गया था। गणपति उत्सव, जिसमें लाखों मूर्तियों का निर्माण, लाखों हाथों को रोजगार, लाखों लोग और घर-घर में गणपति की स्थापना। महाराष्ट्र की अर्थव्यवस्था को चार चांद लगाने वाला उत्सव। एक अखबार के अनुसार 10000 करोड़ की अर्थव्यवस्था का व्यापार मात्र गणेशोत्सव के माध्यम से महाराष्ट्र में होता है। बंगाल में दुर्गा पूजा का उत्सव उमंग से मनाया जाता है, गुजरात में नवरात्र गरबा नृत्य जन-जन के मन में समा गए हैं। नई-नई पोशाकें बनती हैं। केरल में ओणम का त्योहार मानसून के स्वागत के साथ प्रारंभ होता है। पंजाब में बैसाखी फसलों के साथ में प्रारंभ होती है। असम में बिहू तीन बार मनाया जाता है। हम यह कह सकते हैं भारतीय सांस्कृतिक उत्सव व त्योहार सतत विकास की कुंजी हैं। भारत के जनजातीय वर्ग, वनवासी, उनके गीत त्योहार, नृत्य की अनोखी परंपराएँ, राजस्थान में गवरी नृत्य, मध्य प्रदेश में भगोरिया नृत्य, मेघालय में नौकर्मन नृत्य, कर्नाटक में पुथरी नृत्य, तेंलगाना में जतारा नृत्य, यह केवल नृत्य नहीं है, अपितु लोक संस्कृति के प्रचारक हैं। हमारा देश हजारों त्योहार और उत्सवों से भरा पड़ा है। स्वामी विवेकानंद ने कहा था - भारत की संस्कृति लोकोत्सव के माध्यम से समाज की प्राचीन परंपराओं के साथ में नई पीढ़ी को कृति रूप दर्शन कराती है। जिसके कारण हमारी अर्थव्यवस्था, हमारा समाज नव रूप गढ़ता है। हम सभी स्थानीय उत्पादों का अधिक अधिक प्रयोग करें। जिसके कारण स्थानीय उत्सव में स्थानीय मेलों में जो अंत्योदय व्यक्ति है, अंतिम व्यक्ति है, उसका भी विकास संभव हो सकेगा। ❑

भारत के जनजातीय वर्ग, वनवासी, उनके गीत त्योहार, नृत्य की अनोखी परंपराएँ, राजस्थान में गवरी नृत्य, मध्य प्रदेश में भगोरिया नृत्य, मेघालय में नौकर्मन नृत्य, कर्नाटक में पुथरी नृत्य, तेंलगाना में जतारा नृत्य, यह केवल नृत्य नहीं है, अपितु लोक संस्कृति के प्रचारक हैं। हमारा देश हजारों त्योहार और उत्सवों से भरा पड़ा है। स्वामी विवेकानंद ने कहा था - भारत की संस्कृति लोकोत्सव के माध्यम से समाज की प्राचीन परंपराओं के साथ में नई पीढ़ी को कृति रूप दर्शन कराती है। जिसके कारण हमारी अर्थव्यवस्था, हमारा समाज नव रूप गढ़ता है। हम सभी स्थानीय उत्पादों का अधिक अधिक प्रयोग करें। जिसके कारण स्थानीय उत्सव में स्थानीय मेलों में जो अंत्योदय व्यक्ति है, अंतिम व्यक्ति है, उसका भी विकास संभव हो सकेगा।

 ISSN 2581-4133

Role of Vedic Festivals in Rural-Urban Integration in India

Dr. Papai Pal

Assistant Professor,
English
Tripura Government
Law College, Tripura

India, a land of diverse cultures and traditions, finds its unity in the celebration of festivals. Rooted in the Vedic tradition, these festivals not only serve as occasions for joy and spiritual upliftment but also play a significant role in bridging the gap between rural and urban communities. The socio-economic and cultural exchanges during these celebrations foster a sense of national integration, connecting India's villages with its cities in unique and enduring ways.

Vedic Festivals : A Common Cultural Heritage

Vedic festivals like Diwali, Makar Sankranti, Holi, and Navaratri are deeply ingrained in the cultural ethos of India. These festivals are celebrated across the country with regional variations, reflecting the local traditions of both rural and urban communities. Despite these differences, the underlying values of these festivals—gratitude, community bonding, and spiritual renewal—remain constant. This shared cultural heritage acts as a bridge between rural and urban areas, fostering a sense of unity and mutual respect.

Economic Integration Through Festivals

One of the most tangible ways in which Vedic festivals contribute to rural-urban integration is through economic activities.

Festivals create opportunities for rural artisans, farmers, and small-scale industries to connect with urban markets. During festivals like Diwali and Navaratri, urban households often purchase traditional handicrafts, diyas, rangoli materials, and decorations made by rural artisans. This provides rural communities with a platform to showcase their skills and earn livelihoods, creating an economic bond between villages and cities.

Festivals like Pongal, Lohri, and Onam are harvest-centric and celebrate the agrarian lifestyle of rural India. During these festivals, urban populations consume fresh agricultural produce such as sugarcane, rice, and fruits supplied by rural farmers. This exchange not only strengthens rural economies but also creates an appreciation for the hard work of farmers among urban dwellers.

Rural tourism thrives during festivals like Kumbh Mela and Pushkar Fair. Urban tourists flock to these events, experiencing rural traditions firsthand. This influx of tourists boosts local economies and brings rural communities closer to urbanites, fostering mutual understanding.

Cultural Exchange and Social Integration

Vedic festivals are more than just celebrations; they are living traditions that bind India's rural and urban populations into a cohesive cultural fabric. By fostering economic ties, promoting cultural exchange, and preserving traditional values, these festivals play a vital role in rural-urban integration. In an age where the rural-urban divide often threatens national unity, the enduring wisdom of Vedic festivals serves as a beacon of harmony, reminding us that despite our differences, we are part of a shared heritage and destiny.

Vedic festivals act as conduits for cultural exchange between rural and urban communities. Many urban families visit their ancestral villages during festivals to participate in traditional rituals. For example, during Holi, the rural celebration of the festival—with its folk songs, dances, and community feasts—often draws urban participants. This immersion in rural culture strengthens family bonds and reconnects urban residents with their roots.

Conversely, rural traditions influence urban celebrations of Vedic festivals. Urban areas often incorporate folk dances, rural-inspired decorations, and traditional cuisines into their festivities. This blending of rural elements into urban celebrations preserves and promotes traditional practices.

Vedic rituals like Yajnas, recitations of mantras, and communal prayers performed during festivals are shared by both rural and urban communities. This shared spiritual connection transcends geographical boundaries and reinforces a collective cultural identity.

Promoting Social Equality

Vedic festivals provide a platform for breaking down social barriers and promoting inclusivity. During festivals like Navaratri and Janmashtami, urban and rural communities come together to organize events such as Garba dances, Ramlila performances, and Krishna Leela enactments. These events encourage participation from all sections of society, fostering a sense of unity and equality.

Festivals rooted in Vedic traditions emphasize the values of charity and sharing. During Diwali, urban residents often

donate clothes, food, and money to rural communities. Similarly, rural households welcome urban visitors with warmth and hospitality during harvest festivals, creating a spirit of mutual care and respect.

Strengthening Family Bonds

Vedic festivals play a crucial role in maintaining family ties, especially in an era of increasing urbanization and migration. For many urban dwellers, Vedic festivals provide an opportunity to return to their native villages. This annual migration strengthens familial bonds and allows urban residents to reconnect with rural traditions. The exchange of stories, traditions, and experiences during these visits fosters a deeper understanding of both lifestyles. For families unable to reunite physically, festivals like Raksha Bandhan and Bhai Dooj allow for symbolic connections. Rituals performed in one location are mirrored in another, creating a sense of togetherness even when apart. Urbanization often threatens the survival of traditional practices. Vedic festivals, however, provide a platform for the preservation and revival of rural customs.

During festivals like Navaratri and Holi, rural folk art forms such as Bhajans, Kirtans, and traditional dances are performed in urban settings. This not only sustains these art forms but also introduces them to younger, urban generations. Rituals involving Ayurvedic practices, organic farming methods, and eco-friendly decorations during festivals promote traditional knowledge. Urban areas increasingly adopt these practices, creating a cultural and environmental link with rural India.

Environmental Consciousness and Unity

Vedic festivals emphasize harmony with nature, a value that resonates with both rural and urban communities. Rural traditions of using biodegradable materials for decorations, idols, and offerings during festivals like Ganesh Chaturthi and Durga Puja are being adopted in urban areas. This shared commitment to sustainability fosters a collective sense of responsibility towards the environment. Rituals involving the worship of rivers and trees, integral to festivals like Ganga Dussehra and Van Mahotsav, unite rural and urban populations in environmental conservation efforts.

Challenges in Rural-Urban Integration Through Festivals

Urban celebrations are often dominated by commercialization, which can overshadow the simplicity and spiritual essence of rural traditions. Many rural communities face neglect as younger generations migrate to cities, leaving villages with fewer resources to celebrate festivals authentically. Urban adaptations of Vedic festivals sometimes dilute traditional practices, leading to a loss of rural cultural identity. Addressing these challenges requires conscious efforts to respect and preserve the essence of Vedic festivals while fostering inclusivity.

Vedic festivals are more than just celebrations; they are living traditions that bind India's rural and urban populations into a cohesive cultural fabric. By fostering economic ties, promoting cultural exchange, and preserving traditional values, these festivals play a vital role in rural-urban integration. In an age where the rural-urban divide often threatens national unity, the enduring wisdom of Vedic festivals serves as a beacon of harmony, reminding us that despite our differences, we are part of a shared heritage and destiny. Through conscious efforts to preserve their essence, Vedic festivals can continue to inspire unity and solidarity in India's diverse society. ❑

Festivals and Celebrations of Bharath- A Live Testimonial to Bharathiya Culture

Dr. Rohinaksha Shirlalu
Assistant Professor
Department of Folkloristics and Tribal Studies
Central University of Karnataka
Kalaburagi, Karnataka

Bharath is one of the world's oldest and most vibrant civilizations. It is a civilization that has influenced the entire globe, driven by the ethos of universal well-being. When one thinks of Bharath, what comes to mind is its rich and diverse tradition of festivals and celebrations. Unlike any other nation or civilization, Bharath is the cradle of unique, jubilant celebrations that resonate with a profound cultural essence, showcasing the unparalleled beauty of its heritage. The traditions and practices surrounding these festivals and celebrations are the fountains of Bharath's cultural vitality. Despite enduring centuries of foreign invasion and losing political and administrative autonomy, Bharath has preserved its cultural identity and vibrancy through its tradition of celebrating festivals. These festivals play a crucial role in bringing people closer as a society, fostering connections, and uniting minds. They serve as a testament to the enduring spirit and resilience of Bharathiya culture.

Festivals and celebrations are beyond mere entertainment. Considering the beauty of each season (Ritu Pragna), time (Kala Ganana), profoundness in prosperity, and human conveniences to celebrate them are the backdrop of these festivals. They are intricately tied to the agricultural heritage of their respective regions, reflecting the rhythm of nature. A thoughtful observation reveals that there is a unity in the resonance of nature and festivals. These festivities are thoughtfully designed to commemorate the sowing of crops and to celebrate the bounty they yield, symbolizing a harmonious bond with nature's pulse. Embedded within these traditions are spiritual significance, social dimensions, and the intention to preserve and perpetuate the heritage of the society. Festivals not only serve as confluences for people from diverse communities, religions, and traditions, but they also showcase the rich tapestry of dance, music, and artisanal crafts. Through these mediums, the history, puranas, and culture of the nation come to life, reflecting its timeless essence.As an inseparable part of Bharath's way of life, these age-old practices are deeply rooted in their original traditions. They strengthen the bond with one's belief systems, offering a moment of reflection and renewal. By doing so, they ensure the vibrancy and continuity

of cultural legacies, reaffirming their place in the country's enduring heritage.

The festivals and celebrations of our land are imbued with multiple dimensions. While spirituality often forms its foundation, cultural, social, and economic aspects are equally integral. Each festival or celebration carries within it a story rooted in Puranas, a deep connection with nature, and an intent to align with its rhythms. These traditions have shaped the rich cultural heritage of our society. They create spaces for exchanging emotions, fostering connections, and engaging in thoughtful discussions and philosophical dialogues. It is within the vibrant atmosphere of such celebrations that these meaningful exchanges naturally unfold, strengthening the fabric of our collective identity.

Festivals hold a unique power to foster social unity by bringing entire communities together. People from one village, along with those from neighboring villages, converge for a common celebration, creating a strong sense of togetherness. Teachings of sages related to unity and togetherness take their life expressions most beautifully through these festivals. Festivals inspire people to get out of their identities and distinctions; and unite everyone in the society as one magnificent social personality. In addition to this, it will be interesting to look at these festivals, from a very practical, as to how festivals manage to bring a host of economic activities with them. As many economists have noted, Bharath's economic rhythm is intertwined with its festivals. During the festive seasons, the pace of economic transactions accelerates, powered by festival-centric commerce. This festival-driven economy epitomizes equitable distribution, providing opportunities across all levels of society. From farmers cultivating crops to traders in bustling markets, every stakeholder finds a role and a share in the economic cycle. This inclusive approach sustains livelihoods while creating employment opportunities across sectors.The festivals thus serve as a practical model of economic inclusivity and empowerment, exemplifying the principle of shared prosperity. They transform social unity into tangible economic benefits, reinforcing their significance as not just cultural celebrations, but as pillars of holistic community well-being.

Bharathiya festivals are nature and life-centric. We celebrate diverse aspects of nature—trees, mountains, rivers, seas, birds, animals, and even the soil itself—placing them at the heart of the festivities. This extraordinary tradition of honouring nature as sacred is a hallmark of Bharathiya culture. In a land where divinity is perceived in every element of creation, festivals become an expression of gratitude for the beauty of existence. They inspire a commitment to safeguarding nature's bounty while celebrating its splendour. This sentiment is repeatedly echoed in the timeless philosophy, 'Lokah Samastah Sukhino Bhavantu'—may all beings in the universe be happy.This philosophy is not merely a lofty proclamation; it is a way of life, embodied in the practical rituals of festivals. Through these celebrations, the ideals of universal well-being and environmental harmony find tangible expression, reinforcing the message that the welfare of humanity and the preservation of nature are intrinsically linked. Such a vision lies at the core of Bharath's festivals, making them celebrations of both life and the greater good.

One can comprehend the defining feature of Bharathiya festivals and celebrations in terms of how they align their timing and connection to the cycles of nature. These occasions are harmoniously aligned with the changing seasons and the agricultural activities of each region. Far from being arbitrary or artificial, these

festivals emerge as a natural extension of life. They are celebrated when nature herself is at her most bountiful—when fields are brimming with harvest and the farmer's heart dances with joy. Bharathiya festivals are a seamless blend of the natural and the spiritual. Be it the sacred River Ganga or the revered Peepal tree, these elements stand as symbols of this harmonious relationship. What we identify as Bharathiya culture is intricately interwoven into the framework of these festivals, embodying its ethos in every ritual and tradition. Festivals include the social, Dharmika, and Puranic values.

The enduring vitality of Sanatana values, despite centuries of invasions and oppression by foreign powers, can be traced to a singular, profound force—the festivals and celebrations established by our ancestors. The contributions of festivals in the preservation and continuation of Dharma and culture are immense. Unlike fleeting occurrences, festivals are not mere events but encompassing their entirety and adding depth to existence. By celebrating festivals, life gains a broader perspective and a deeper meaning. They extend the boundaries of human experience, reaffirming the timeless connection between tradition and daily living. These festivals have been pivotal in ensuring the continuity of cultural values, serving as both a shield and a source of renewal for our heritage.

In recent times, a systematic effort to portray Hindu festivals negatively has come to light, equating them with environmental harm and pollution. This deliberate narrative, primarily driven by anti-Hindu elements and so-called progressives, seeks to diminish the values and significance of these celebrations.For instance, during Deepavali, the bursting of firecrackers is accused of causing air pollution. Similarly, the immersion of Ganesha and Durga idols in water bodies is blamed for water contamination. The use of decorative lights during Navaratri and Durga Puja is criticized for wasting energy, while the burning of Ravana effigies and the lighting of lamps during Deepavali are claimed to harm the ozone layer and raise global warming. These arguments often confuse the younger generation, stripping away the joy and essence of these festivities under the guise of environmental concerns.The irony is that these so-called environmental advocates remain silent about countless other activities that harm the environment throughout the year. Their criticism disproportionately targets Hindu festivals, ignoring their profound connection to nature. Hindu traditions uniquely incorporate environmental reverence into their practices. For example:Naga (Sarpent) worship and sacred groves (Nagabana, Devarakadu) signify the sanctity of forests and serpentine ecosystems. The veneration of river and forest deities upholds the purity of water bodies and green cover. Birds and animals are seen as divine vehicles, fostering respect for all living beings. Practices like ritual baths in holy rivers emphasize water conservation and reverence. These traditions reflect a deep-seated gratitude and spiritual connection to nature, which are integral to Hindu festivals. Far from being harmful, these celebrations are a reminder of the harmony between humanity and the environment, fostering a sense of stewardship for natural resources. Rather than dismissing Hindu festivals, it is crucial to appreciate their intrinsic environmental values and the lessons they impart. They embody a balanced approach to living, celebrating, and protecting the planet—a philosophy often missing in modern lifestyles.

A generation that fails to grasp the essence of these traditions is emerging. Festivals have, for many, become just another holiday—a day for extended sleep or personal leisure—rather than a time of meaningful communal celebration. This shift threatens to erode the collective joy and social harmony that festivals historically fostered. Festivals once united entire villages, towns, or neighbourhoods in shared joy and cultural bonding. They served as a vital process of socialization and cultural integration, a role that is now diminishing.

Bharathiya festivals embody timeless values that resonate with every aspect of life. At their core, they inspire qualities like the triumph of truth over falsehood and good over evil through deeply symbolic celebrations.Deepavali, the festival of lights, represents the victory of light over darkness, symbolizing the conquest of knowledge over ignorance. Holi, the festival of colours, fosters unity and camaraderie among

people from all walks of life, transcending social barriers. Navaratri, dedicated to the worship of power, highlights the destruction of evil and the rejuvenation of righteousness. Ganesh Chaturthi, beyond its religious significance, became a rallying point for national unity during India's freedom struggle, inspiring collective strength against British colonial rule. Makar Sankranti, marking the transition of the sun into the northern hemisphere, symbolizes change, progress, and harmony with nature. The Kumbh Mela, held every twelve years, is one of the largest spiritual congregations in the world, epitomizing the discipline and unity of Hindu society.Each festival conveys profound messages through rituals, symbolism, and practices. Together, they justify Bharath's epithet as the 'Land of Festivals'. The vibrant celebrations knit together a geographically vast and culturally diverse nation, binding it under the unifying ethos of collective values and shared traditions.From the northern peaks to the southern coasts, and the eastern hills to the western deserts, these festivals bridge artificial divides—be they linguistic, cultural, or regional. They weave a tapestry of emotional, spiritual, and cultural connectivity, where artificial separations dissolve, and India stands united. Festivals are also the lifeblood of Bharath's socio-cultural framework. They integrate rural, urban, and spiritual traditions into a cohesive whole, showcasing the dynamism of forest, village, and urban life alike (Vana-Grama-Nagar). The vibrancy of Bharathiya festivals

underscores the nation's unparalleled ability to celebrate diversity while nurturing unity.

It is no exaggeration to state that festivals occur daily in some part of Bharath, making them an integral part of the nation's cultural fabric. These celebrations infuse vitality and joy into life, standing as pillars of Bharathiya tradition. The vibrant spirit of Bharathiya culture is synonymous with an enduring sense of celebration, a quality that should be passed on meaningfully to the younger generations. However, due to the pressures of modern life and the erosion of cultural awareness, many festivals have lost their fervour and meaning. Questions arise about whether we truly celebrate them with understanding or merely observe them symbolically. Factors such as colonial influence and cultural alienation have played a role, but the disconnection is more prominent in today's fast-paced, modern lifestyle.

A generation that fails to grasp the essence of these traditions is emerging. Festivals have, for many, become just another holiday—a day for extended sleep or personal leisure—rather than a time of meaningful communal celebration. This shift threatens to erode the collective joy and social harmony that festivals historically fostered. Festivals once united entire villages, towns, or neighbourhoods in shared joy and cultural bonding. They served as a vital process of socialization and cultural integration, a role that is now diminishing. To preserve this essence, it is essential to reimagine and reinvigorate our celebrations with awareness and purpose. Recognizing the philosophical and spiritual underpinnings of these traditions adds depth to their value. Festivals are not mere rituals; they are embodiments of profound spiritual aspirations, societal unity, and the celebration of life itself. By acknowledging and preserving this legacy, we can ensure that the rich cultural tapestry of Bharathiya festivals remains vibrant for future generations. ❑

Festivals of Bharat

Dr. TS Girish Kumar

Retd. Professor,
MSU Baroda, Gujrat
Member ICPR

Festivities are known to Bharatiyas as Utsavs. How appropriate shall the translation of utsav into festivals remains to be inspected, as the loss of energies in Sanskrit concepts while translating them in to foreign languages like English shall be appalling, one can take the examples of Swarga and Naraka as heaven and hell in English, and just going through their conceptual connotations.

Whatever may be an unpacked concept of festivities, which shall indeed vary from societies to societies, the concept of Utsav shall stand out as unique. This comes from the fact that Bharatiya society – which actually is one society as Bharatiya Sanskriti is one whole and all variants. Bharatiya societies have this one edifice – as one whole: the super structures vary, keeping the substratum as just one of Bharatiya Sanskriti.

Bharatiya Sanskriti becomes one as it is an evolution or emergence from one knowledge tradition, the Vedopanishadic knowledge tradition. that is just one for everyone in Bharat irrespective the faith systems one may be following. As the Vedopanishadic knowledge tradition had long known the nature of nature as multiple and plural, the Hindu Dharma itself demonstrates this multiplicity and plurality through the very faith systems of the Hindus.

This shall make Utsavs in

This simply means, that, the most benevolent king of Kerala was from Bharuch, Gujarat! What more is required to speak of the one-ness of Bharat, in spite of long distance of land. One need not speak of the Sanskriti of Bharat here, it is evidently one for all and present among all. Here, one experiences the Vedopanishadic epistemology of co-existence of the multiple and plural on a practical plain, through utsavs. Thus, utsavs greatly contribute not only to knowing our Sanskriti, but also to our togetherness.

 ISSN 2581-4133

Bharat unique and multiple at the same time. Bharat has many geographical variants, many languages, many food habits and even ways of getting dressed. When we understand these phenomena as external expressions of many variants of the one and only knowledge tradition, all such expressions are spontaneously united as one whole, where everything becomes expression of the one whole, which is the Vedopanishadic knowledge tradition, the Bharatiya knowledge tradition.

Utsavs of Bharat and festivities in other societies

Every society or culture has many festivals of and on various occasions. They are mostly expressions of mirth, joy and happiness of some natural, cultural or social events generally. There could be harvest festivals as well as religious festivals.

The vibrancy and variety in utsavs of Bharat could be seen as a corollary to the Hindu faith system as well as the numbers of Hindu religious texts. To make a comparison between Bharatiya utsavs and other society's utsavs, let us make a comparison of Hindu Dharma with Semitic religions like Christianity, Islam etc. They normally have just one God, and mostly one religious book. Here, the Hindus have many deities, many books as well as multiple faith system.

This makes it only natural that utsavs in Bharat to stand out as many, multiple and much more vibrant.

Utsavs

Utsavs are expressions of societies' general attitudes which are multiple, in multiple manners. They are means to relax, interact freely, express emotions etc. apart

from practical Dharma in action. The later part is intimately connected with the Vedopanishadic knowledge tradition, which has the epistemology of co-existence of the multiple and plural.

It becomes practically impossible for one to make an inventory of all utsavs of Bharat given both quantities apart from qualitative distinctions at the same time. The Sanskritic moorings of such events are beyond words to surrender. For instance, let us look at the 'Onam' utsav of Kerala through an Onam narrative.

The utsav of Onam is celebrated in Kerala to welcome their one-time benevolent king Mahabali, who is visiting his onetime subjects on that particular day. The king was supposed to be welfare and benevolent king, who ensured the equality of all. He had one problem, that he did the mistake of ensuring welfare of his subjects even at the cost of others. Here one can recall, that, this precisely was the shortcoming of Hitler, as he mentions it explicitly in his autobiography 'Mein Kemph'. As a result, Mahavishnu took Vamanavtar and sent Mahabali to Patallok with the permission of visiting his subjects once a year, on Onam day.

It is interesting to note the following specialties here. Onam used to be Vamanostav in early days, which got the name changed in time. Mahabali's son of Purochana, son of Prahlada, who is son of Hiranyakashipu. Mahabali was doing Aswametha at the bank of Narmada, where Mahavishnu appears in his Vamanavtara to send Mahabali to Patallok. Hiranyakashipu is from Brigukaksh, which is Bharuch in Gujarat.

This simply means, that, the most benevolent king of Kerala was from Bharuch, Gujarat! What more is required to speak of the one-ness of Bharat, in spite of long distance of land. One need not speak of the Sanskriti of Bharat here, it is evidently one for all and present among all.

Here, one experiences the Vedopanishadic epistemology of co-existence of the multiple and plural on a practical plain, through utsavs. Thus, utsavs greatly contribute not only to knowing our Sanskriti, but also to our togetherness. ❑